मूल्य 50/-

पंचायत 24

वर्ष-01 अंक-02 अगस्त, 2026

हिंदी मासिक पत्रिका

यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो-2026

लोकल से ग्लोबल' की उड़ान:

क्या उत्तर प्रदेश बनने जा रहा है दुनिया का नया व्यापारिक और विनिर्माण केंद्र?

उत्तर प्रदेश: जहां संभावनाएं बनती हैं, और भविष्य संवरता है

डॉ महेश शर्मा, पूर्व केंद्रीय मंत्री भारत सरकार
और सांसद गौतम बुद्ध नगर लोकसभा सीट

भूपेंद्र चौधरी
केबिनेट मंत्री उत्तर प्रदेश सरकार

तेजपाल सिंह नागर, विधायक, दादरी विधान सभा

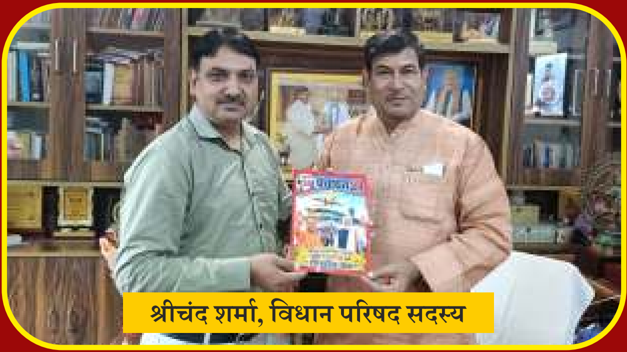
श्रीचंद शर्मा, विधान परिषद सदस्य

नरेंद्र सिंह भाटी विधान परिषद सदस्य

मनोज गोयल
वरिष्ठ समाजसेवी और चैयरमेन केडीएमजी समूह

मयंक अग्रवाल, चैयरमेन आईआईएमटी समूह

गीता पंडित, दादरी नगरपालिका अध्यक्ष

देवा भाटी, जिला पंचायत सदस्य

डॉ नवीन कुमार, अध्यक्ष नवीन अस्पताल समूह

Jointly Organised by

Government of Uttar Pradesh | India Exposition Mart Ltd.

UP INTERNATIONAL TRADE SHOW

4th Edition

ULTIMATE SOURCING BEGINS HERE

September 25 26 27 28 29, 2026

India Expo Centre & Mart, Greater Noida

SHOWCASE YOUR INNOVATIONS at UPITS 4.0 - INDIA'S LARGEST STATE-LED TRADE SHOW

Connect With The Best Buyers at The Ultimate Marketplace for Uttar Pradesh's Industrial, Manufacturing, Innovation, & Export Ecosystem.

WHY EXHIBIT AT UPITS 4.0?

- Meet Global Buyers From 80+ Countries
- Industry Decision-Makers
- Generate Business Leads
- Explore Export Opportunities
- Elevate Your Products To Global Markets

Exhibit Across Key Growth Sectors

- MSME
- Industrial Infrastructure Projects
- ODOP
- Electronics IT & ITES
- Defence & Aerospace
- Handloom, Handicraft, Khadi & Textile
- Agro & Allied
- Wood Work & Furniture
- Tourism & Film
- Renewable Energy
- And Many More...

Position Your Brand at the Centre of Industrial Growth Opportunity!

2,400+	1,50,000+	4,50,000+	1,10,000+
Exhibitors	B2B Visitors	B2C Visitors	Gross area in Sqm.

BOOK YOUR SPACE NOW

For Space Booking, Contact Us:

+91-7428235690 | +91-9319993259

upits@indiaexpocentre.com

www.upinternationaltradeshow.com

पंचायत 24

वर्ष-01 अंक-02 अगस्त, 2026

संरक्षक मंडल

नरेंद्र कुमार शर्मा

डॉ नवीन कुमार

चैयरमेन नवीन अस्पताल समूह

डॉ महेंद्र नागर

चैयरमेन नागर हॉस्पिटल

विनोद गोयल

निदेशक शैफाली स्कूल समूह एवं प्रबंधक अग्रसेन इंटर कॉलेज दादरी

योगेंद्र शर्मा

अध्यक्ष फोनरवा, नोएडा

सरबजीत

चैयरमेन आईआईए ग्रेटर नोएडा चेप्टर

प्रधान संपादक

डॉ देवेंद्र कुमार शर्मा

सलाहकार सम्पादक

राजेश बैरागी

प्रबंधक

हिमानी शर्मा

विधिक सलाहकार

ममता शर्मा

अधिवक्ता सुप्रीम कोर्ट

रजनीश यादव

मनु बैरागी

प्रवीण शर्मा

स्वामी प्रकाशक संपादक डॉ. देवेन्द्र कुमार शर्मा द्वारा मुद्रक मनोज वत्स स्वामी वत्स ऑफसेट मकान नंबर 25 मुद्दा हाउस ऑफ सी ब्लॉक बारात घर चौड़ा रघुनाथपुर सेक्टर 22 गौतम बुध नगर उत्तर प्रदेश 201301 से मुद्रित एवं पुराना नेशनल हाईवे 91, चितेहरा दादरी, गौतमबुद्ध नगर, उ0प्र0-203207 से प्रकाशित

संपादक : डॉ. देवेन्द्र कुमार शर्मा

किसी भी वाद विवाद से निपटने के लिए जिला गौतमबुद्धनगर मान्य होगा

06 जब श्रेय सबका तो जवाबदेही किसकी?

20 लोकल से ग्लोबल' की उड़ान...

"शिक्षा केवल डिग्री नहीं, राष्ट्र निर्माण... 28

डा. देवेन्द्र कुमार शर्मा

जब कुछ लोगों का अतिक्रमण लाखों लोगों की आज़ादी पर भारी पड़ जाए तब सवाल उठता है क्या यह सिस्टम चंद लोगों के लिए बना है?

मानसून की पहली ही बारिश ने एक बार फिर हमारे विकास मॉडल की चमक के पीछे छिपी सच्चाई को उजागर कर दिया। देश के महानगरों से लेकर छोटे कस्बों तक जलभराव की तस्वीरें सामने आई। मुंबई, दिल्ली, गुरुग्राम, सूरत और गौतम बुद्ध नगर—नाम अलग हैं, लेकिन समस्या एक ही है। फर्क सिर्फ इतना है कि कहीं इसे "अर्बन फ्लडिंग" कहा जाता है और कहीं इसे लोगों की नियति मान लिया जाता है। गौतम बुद्ध नगर में नोएडा, ग्रेटर नोएडा, दादरी, दनकौर सहित अनेक क्षेत्रों में जलभराव देखने को मिला, लेकिन तिलपता गांव की स्थिति सबसे अधिक चिंता पैदा करने वाली रही। दादरी–सूरजपुर मार्ग पर दो फीट से अधिक पानी भर जाता है। जिस सड़क को पार करने में सामान्यतः दो-तीन मिनट लगते हैं, वहां लोग घंटों जाम और गंदे पानी में फंसने का मजबूर होते है। यह कोई प्राकृतिक आपदा नहीं थी, बल्कि वर्षों से चली आ रही प्रशासनिक उपेक्षा और अव्यवस्थित विकास का परिणाम थी।

सवाल यह नहीं है कि बारिश कितनी हुई। असली सवाल यह है कि पानी निकलता क्यों नहीं?

समस्या की जड़ दूर नहीं, सड़क के दोनों किनारों पर दिखाई देती है। फुटपाथों पर अतिक्रमण, नालियों पर स्थायी निर्माण, जल निकासी मार्गों का बंद होना और सार्वजनिक भूमि पर निजी कब्जे—यही वह कारण हैं जिन्होंने एक सामान्य बारिश को आम लोगों के लिए दुर्भाग्य बना दिया। "जहां रास्ते सिकुड़ जाते हैं, वहां समस्याएं फैल जाती हैं।" यही आज तिलपता की कहानी है। विडंबना यह है कि इन अव्यवस्थाओं का लाभ कुछ लोगों को मिलता है, लेकिन इसकी कीमत पूरा गांव और लाखों राहगीर चुकाते हैं। बरसात का पानी अब केवल सड़क तक सीमित नहीं रहा, बल्कि लोगों के घरों तक पहुंच चुका है। यह केवल जलभराव नहीं, बल्कि व्यवस्था की विफलता का सार्वजनिक प्रदर्शन है। लोकतंत्र की सबसे बड़ी कसौटी यही है कि सार्वजनिक हित को निजी हितों पर प्राथमिकता मिले। यदि कुछ लोगों के अवैध निर्माण और अतिक्रमण के कारण लाखों नागरिकों का आवागमन बाधित हो, व्यापार प्रभावित हो, बच्चों की पढ़ाई और मरीजों की आवाजाही संकट में पड़ जाए, तो यह केवल स्थानीय समस्या नहीं, बल्कि शासन-प्रशासन की जवाबदेही का प्रश्न बन जाता है। जब पुलिसकर्मी घंटों पानी में खड़े होकर ट्रैफिक संभालने का प्रयास करते हैं, तब यह दृश्य केवल उनकी मेहनत नहीं दिखाता, बल्कि उस व्यवस्था की मजबूरी भी उजागर करता है जो समस्या के कारणों को हटाने के बजाय केवल उसके परिणामों से लड़ती रहती है। "बीमारी का इलाज छोड़कर केवल लक्षण दबाने से स्वास्थ्य नहीं सुधरता।" यही स्थिति यहां भी दिखाई देती है। यह मान लेना कठिन है कि संबंधित विभागों को इस स्थिति की जानकारी नहीं है। प्रश्न जानकारी का नहीं, बल्कि इच्छाशक्ति का है। यदि देशभर में सार्वजनिक भूमि पर अवैध कब्जों के विरुद्ध कठोर अभियान चल सकते हैं, तो फिर ऐसे संवेदनशील मार्गों पर वर्षों से बने अतिक्रमण क्यों बने हुए हैं? कानून की प्रभावशीलता का पैमाना उसका समान और निष्पक्ष अनुपालन होता है।

तिलपता की यह तस्वीर केवल एक गांव की कहानी नहीं है। यह एक चेतावनी है कि यदि समय रहते मूल कारणों पर कार्रवाई नहीं हुई, तो ऐसे हालात जिले के अन्य क्षेत्रों में भी सामान्य होते जाएंगे। विकास केवल चौड़ी सड़कों, ऊंची इमारतों और बड़े निवेश से नहीं मापा जाता; विकास की असली पहचान यह है कि पहली बारिश में आम नागरिक सुरक्षित और सम्मानपूर्वक अपने घर तक पहुंच सके।

आज आवश्यकता किसी पर दोषारोपण की नहीं, बल्कि साहसिक निर्णयों की है। अतिक्रमण हटाने, जल निकासी व्यवस्था को पुनर्जीवित करने, फुटपाथों को मुक्त कराने और सार्वजनिक मार्गों की गरिमा बहाल करने की आवश्यकता है। यही प्रशासन की संवेदनशीलता और सुशासन की वास्तविक परीक्षा होगी। क्योंकि अंततः सवाल केवल तिलपता का नहीं है। सवाल यह है कि क्या व्यवस्था कुछ लोगों की सुविधा के लिए चलेगी, या लाखों नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए? लोकतंत्र में सार्वजनिक हित सर्वोपरि होना चाहिए। यदि व्यवस्था इस मूल सिद्धांत को भूल जाए, तो पहली बारिश ही उसकी सबसे बड़ी परीक्षा बन जाती है। ■

जब श्रेय सबका तो जवाबदेही किसकी?

किसी भी सभ्य समाज की पहचान केवल उसकी ऊँची इमारतों, चौड़ी सड़कों और आधुनिक सुविधाओं से नहीं होती, बल्कि इस बात से होती है कि वहाँ अधिकार और उत्तरदायित्व का संतुलन कितना मजबूत है। लोकतांत्रिक व्यवस्था का एक मूल सिद्धांत है—"जहाँ अधिकार है, वहाँ उत्तरदायित्व भी होना चाहिए।" यदि कोई संस्था उपलब्धियों का श्रेय लेने में सबसे आगे खड़ी हो, तो विफलताओं और दुर्घटनाओं के समय वह स्वयं को दर्शक घोषित नहीं कर सकती।

ग्रेटर नोएडा के नॉलेज पार्क-2 स्थित कलाधाम हाउसिंग सोसाइटी में छह वर्षीय मासूम अव्यान की बोरिंग के लिए खोदे गए गड्ढे में गिरकर हुई दर्दनाक मृत्यु केवल एक प्रशासनिक लापरवाही का मामला नहीं है। यह उस सामूहिक उत्तरदायित्व की भी परीक्षा है, जिसकी चर्चा अक्सर विकास कार्यों के समय बड़े उत्साह से की जाती है। इस दुर्घटना ने एक असहज प्रश्न समाज के सामने रख दिया है—क्या आरडब्ल्यूए (RWA) केवल उपलब्धियों का श्रेय लेने के लिए है, या फिर संकट और दुर्घटनाओं के समय उसकी भी कोई नैतिक जवाबदेही बनती है?

इस घटना में प्रथम दृष्टया सबसे बड़ी जिम्मेदारी निश्चित रूप से ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण की बनती है। यदि प्राधिकरण के आदेश पर बोरवेल का कार्य कराया जा रहा था, तो कार्यस्थल की सुरक्षा, बैरिकेडिंग, चेतावनी संकेत और सतत निगरानी उसकी कानूनी जिम्मेदारी थी। इन दायित्वों के निर्वहन में गंभीर चूक हुई। यही कारण है कि प्राधिकरण के मुख्य कार्यपालक अधिकारी ने संबंधित एजेंसी से लेकर पर्यवेक्षण करने वाले अधिकारियों और कर्मचारियों तक के विरुद्ध कार्रवाई की। यह स्वीकारोक्ति इस बात का प्रमाण है कि प्रशासनिक तंत्र अपनी जिम्मेदारी से पूरी तरह इनकार नहीं कर सकता।

किन्तु प्रश्न यहीं समाप्त नहीं होता

हर सेक्टर और प्रत्येक हाउसिंग सोसाइटी में आरडब्ल्यूए स्वयं को निवासियों का प्रतिनिधि बताती है। पानी की समस्या हो, बिजली का मुद्दा हो, सुरक्षा का प्रश्न हो, पार्कों का विकास हो या सड़क की मरम्मत—हर उपलब्धि के साथ आरडब्ल्यूए की सक्रियता का उल्लेख अवश्य किया जाता है। कई बार विकास कार्यों का श्रेय लेने की होड़ इतनी तीव्र हो जाती है कि एक ही कार्य के लिए अनेक दावेदार सामने आ जाते हैं। ऐसे में यह स्वाभाविक प्रश्न है कि यदि सफलता सामूहिक श्रेय का विषय है, तो असफलता केवल प्रशासन (प्राधिकरण) की जिम्मेदारी कैसे हो सकती है?

बताया गया कि जिस स्थान पर बोरिंग खोदा गया, वह मूल योजना के अनुसार सोसाइटी के बाहर ग्रीन बेल्ट में होना था। यदि वास्तव में ऐसा था और भारी-भरकम मशीन सोसाइटी के भीतर प्रवेश कर गई, पार्किंग स्थल तक पहुँची, गहरा गड्ढा खोद दिया और कई घंटों तक कार्य चलता रहा, तो क्या यह संभव है कि पूरी आरडब्ल्यूए को इसकी भनक तक न लगी हो?

यदि आरडब्ल्यूए यह कहती है कि उसे इसकी जानकारी ही नहीं थी, तो यह स्वयं उसके दावों पर प्रश्नचिह्न है। और यदि जानकारी थी, तो यह और भी गंभीर स्थिति है कि उसने सुरक्षा मानकों के पालन को सुनिश्चित कराने की कोई पहल नहीं की।

कहावत है—"घर का मुखिया सो जाए, तो चौखट जागकर भी घर नहीं बचा सकती।" यही स्थिति यहाँ दिखाई देती है। आरडब्ल्यूए कानूनी रूप से प्राधिकरण नहीं है, लेकिन सामाजिक रूप से वह सोसाइटी की सामूहिक चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। उसकी भूमिका केवल ज्ञापन देना, चुनाव लड़ना या सोशल मीडिया पर सक्रिय रहना नहीं हो सकती। उसका सबसे बड़ा दायित्व अपने निवासियों के हितों और सुरक्षा पर सतत निगरानी रखना है।

यह भी सत्य है कि आरडब्ल्यूए को प्राधिकरण जैसी वैधानिक शक्तियाँ प्राप्त नहीं हैं। वह किसी निर्माण कार्य को रोकने का कानूनी अधिकार शायद न रखती हो, लेकिन वह प्रश्न तो पूछ सकती थी—यह कार्य किस अनुमति से हो रहा है? सुरक्षा प्रबंध कहाँ हैं? बैरिकेडिंग क्यों नहीं है? बच्चों की आवाजाही वाले क्षेत्र में खुले गड्ढे को बिना सुरक्षा के क्यों छोड़ा गया?

कई बार दुर्घटनाएँ केवल इसलिए नहीं होतीं कि किसी ने गलती की, बल्कि इसलिए भी होती हैं कि आसपास

मौजूद लोगों ने समय रहते प्रश्न पूछने का साहस नहीं किया।

भारतीय लोकजीवन में एक प्रसिद्ध कहावत है—"बाड़ ही खेत खाने लगे, तो रखवाली कौन करेगा?" यदि सोसाइटी की सुरक्षा का दावा करने वाली संस्था अपने ही परिसर में चल रहे जोखिमपूर्ण कार्य से अनभिज्ञ रहे, तो यह स्थिति चिंताजनक है।

हमारा उद्देश्य किसी संस्था को कठघरे में खड़ा करना नहीं, बल्कि उत्तरदायित्व की संस्कृति पर गंभीर विमर्श करना है। प्रशासनिक जवाबदेही अनिवार्य है और इस मामले में वह स्पष्ट रूप से बनती है। परंतु सामाजिक संस्थाओं की नैतिक जिम्मेदारी भी उतनी ही आवश्यक है। लोकतंत्र केवल अधिकारों का उत्सव नहीं, बल्कि दायित्वों का अनुशासन भी है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि आरडब्ल्यूए स्वयं भी इस घटना की स्वतंत्र समीक्षा करे। यदि कहीं चूक हुई है, तो उसे स्वीकार करे। आत्ममंथन किसी संस्था को छोटा नहीं बनाता; बल्कि उसकी विश्वसनीयता बढ़ाता है। दुनिया की प्रतिष्ठित संस्थाएँ अपनी गलतियों को स्वीकार करके ही अधिक मजबूत बनी हैं।

कलाधाम की यह घटना केवल एक मासूम की मृत्यु नहीं, बल्कि शहरी नागरिक व्यवस्था के लिए एक चेतावनी है। यदि इससे भी हम यह नहीं सीख पाए कि सुरक्षा सामूहिक जिम्मेदारी है, तो भविष्य में ऐसी घटनाएँ फिर दोहराई जा सकती हैं।

अंततः यही कहा जा सकता है कि श्रेय और जवाबदेही एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यदि कोई संस्था विकास कार्यों की सफलता का श्रेय लेने में आगे रहती है, तो उसे विफलताओं और दुर्घटनाओं के समय भी नैतिक रूप से आगे आकर आत्ममंथन करना चाहिए।

क्योंकि इतिहास केवल यह नहीं लिखता कि किसने उपलब्धियों का दावा किया था; इतिहास यह भी दर्ज करता है कि संकट की घड़ी में किसने अपनी जिम्मेदारी स्वीकार की थी।

यदि किसी समाज की संस्थाएँ अपने आसपास घट रही संभावित पीड़ा को समय रहते रोकने का प्रयास नहीं करतीं, तो केवल कानूनी दायित्व से मुक्त हो जाना पर्याप्त नहीं होता। समाज अंततः नैतिक उत्तरदायित्व का भी लेखा-जोखा रखता है। ■

कलाधाम सोसाईटी

विकास की दौड़ में पिछड़े नोएडा-ग्रेटर नोएडा के गांव आपदा के मुहने पर आकर खडे हो गए

17 जुलाई 2018 को ग्रेटर नोएडा वेस्ट के शाहबेरी में दो बहुमंजिला इमारतें भरभराकर गिर गई थीं। इस दर्दनाक हादसे में 9 लोगों की मौत हुई थी। इस घटना ने पूरे देश को झकझोर दिया था और अनियोजित निर्माण की भयावह तस्वीर सामने रख दी थी। करीब आठ वर्ष बाद, 15 जुलाई 2026 को नोएडा के मामूरा गांव में एक पांच मंजिला इमारत में भीषण आग लग गई। दो लोगों की जान चली गई, जबकि पुलिस, फायर ब्रिगेड और प्रशासन ने कठिन परिस्थितियों में लगभग सौ लोगों को सुरक्षित बाहर निकाला। संकरी गलियों, अवैध निर्माण और अग्निशमन वाहनों के सीमित प्रवेश ने राहत कार्य को बेहद चुनौतीपूर्ण बना दिया। यहां के गांव आपदा के मुहने पर आकर खडे हो गए हैं। ये दोनों घटनाएं अलग-अलग नहीं हैं। ये उस विकास मॉडल की चेतावनी हैं, जिसमें चमकते शहरों के बीच बसे गांवों को लगभग उनके हाल पर छोड़ दिया गया।

विश्वस्तरीय शहरों की छाया में उपेक्षित गांव

नोएडा और ग्रेटर नोएडा आज देश के सबसे तेज़ी से विकसित हो रहे शहरी क्षेत्रों में गिने जाते हैं। एक्सप्रेसवे, मेट्रो, डेटा सेंटर, इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योग, आईटी पार्क, फिल्म सिटी, नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट और आधुनिक हाईराइज टाउनशिप—यह सब विकास की नई तस्वीर पेश करते हैं। लेकिन इसी तस्वीर का दूसरा पक्ष भी है। इन उद्योगों, फैक्ट्रियों, संस्थानों और कार्यालयों में काम करने वाले लाखों श्रमिक, निजी कर्मचारी, छोटे व्यवसायी और हजारों छात्र सस्ते आवास की तलाश में गांवों की ओर चले गए। क्योंकि नियोजित सेक्टरों और हाउसिंग सोसायटियों के मकान उनके बजट से बाहर थे। यहीं से शुरू हुई एक नई शहरी समस्या।

खेती की जमीन से किराए की अर्थव्यवस्था तक

भूमि अधिग्रहण के बाद ग्रामीणों को मुआवजा मिला। बहुत से परिवारों ने खेती छोड़कर बहुमंजिला मकान बनाना शुरू किया। किराया उनकी स्थायी आय का साधन बन गया। समय के साथ पैतृक संपत्ति का बंटवारा हुआ। छोटे-छोटे प्लॉटों पर बहुमंजिला मंजिला इमारतें खड़ी होने लगीं। अधिकांश निर्माण बिना वैज्ञानिक डिजाइन, बिना पर्याप्त पार्किंग, बिना अग्नि सुरक्षा और बिना सुरक्षित निकासी मार्ग के किए गए। संकरी गलियां पहले जैसी ही रहीं, लेकिन उन पर

आबादी कई गुना बढ़ गई।

गांव न रहे, शहर भी नहीं बन पाए

आज शाहबेरी, मामूरा, छलेरा, हरौला, बरौला, सलारपुर, रोहिल्लापुर, सुत्याना, पतवाड़ी, हैबतपुर, इटेड़ा, तुगलपुर और ऐसे सैकड़ों गांव एक विचित्र स्थिति में खड़े हैं। न वहां गांव जैसी खुली सामाजिक संरचना बची है, न शहर जैसी सुव्यवस्थित नागरिक सुविधाएं विकसित हुईं। यहां सड़कें संकरी हैं। सीवर व्यवस्था अपर्याप्त है। पार्किंग लगभग नहीं है। फायर ब्रिगेड की पहुंच कठिन है। एम्बुलेंस समय पर नहीं पहुंच पाती। बिजली और जलापूर्ति पर लगातार दबाव बढ़ रहा है। यानी जनसंख्या शहर जैसी हो गई, लेकिन आधारभूत संरचना गांव वाली ही रह गई।

एक ही प्राधिकरण के अंतर्गत विकास के दो चेहरे

यमुना, नोएडा और ग्रेटर नोएडा प्राधिकरणों ने आधुनिक सेक्टरों में भवन निर्माण के कठोर नियम लागू किए। वहीं दूसरी ओर गांवों में बहुमंजिला निर्माण वर्षों तक बिना समुचित नियमन के होता रहा। एक ओर वैज्ञानिक मानकों वाले सेक्टर हैं, दूसरी ओर उन्हीं सेक्टरों से सटे गांवों में अनियोजित बहुमंजिला इमारतों का जंगल। यह दोहरा विकास मॉडल आज अनेक प्रश्न खड़े करता है। जिम्मेदारी किसकी? क्या यह केवल ग्रामीणों की गलती है? यदि अवैध निर्माण हो रहे थे तो संबंधित विभाग वर्षों तक मौन क्यों रहे? यदि अग्निशमन मानकों का पालन नहीं हो रहा था तो निरीक्षण क्यों नहीं हुए? यदि भवन असुरक्षित थे तो निर्माण के समय कार्रवाई क्यों नहीं हुई?यदि गांवों की आबादी कई गुना बढ़ रही थी तो उनके लिए अलग शहरी पुनर्विकास नीति क्यों नहीं बनाई गई? इन प्रश्नों के उत्तर केवल प्रशासनिक फाइलों में नहीं, बल्कि भविष्य की नीतियों में खोजने होंगे।

विश्वस्तरीय विकास की असली परीक्षा

नोएडा और ग्रेटर नोएडा की पहचान केवल ऊंची इमारतों, एक्सप्रेसवे और निवेश सम्मेलनों से नहीं बनेगी। विश्वस्तरीय शहर वह होता है जहां सबसे कमजोर नागरिक भी सुरक्षित जीवन जी सके। यदि लाखों श्रमिक, कर्मचारी और छात्र असुरक्षित बहुमंजिला भवनों में रहने को मजबूर हैं, तो विकास की तस्वीर अधूरी है।

अब क्या समाधान?

समाधान केवल अवैध निर्माण तोड़ने में नहीं है। आवश्यक है कि गांवों के लिए अलग री-डेवलपमेंट नीति बनाई जाए। भवन निर्माण के लिए स्पष्ट और व्यावहारिक नियम लागू किए जाएं। फायर सेफ्टी, संरचनात्मक सुरक्षा और आपदा प्रबंधन को अनिवार्य बनाया जाए। संकरी गलियों के चौड़ीकरण और आधारभूत सुविधाओं के विस्तार की दीर्घकालिक योजना बने। श्रमिकों और छात्रों के लिए किफायती किराये के आवास विकसित किए जाएं। पुराने भवनों का वैज्ञानिक स्ट्रक्चरल ऑडिट कराया जाए। डूब क्षेत्र और अवैध कॉलोनियों पर समय रहते प्रभावी नियंत्रण किया जाए। दरअसल, शाहबेरी और मामूरा केवल दो दुर्घटनाओं के नाम नहीं हैं। वे उस विकास मॉडल के प्रतीक हैं जिसमें चमकते शहरों की रोशनी के पीछे गांवों का अंधेरा छिप गया। गौतम बुद्ध नगर के गांव आज एक संक्रमणकाल में हैं—वे गांव रहे नहीं और शहर बन नहीं पाए। यदि आज भी इन गांवों के पुनर्विकास, सुरक्षित भवन निर्माण, सस्ती आवास नीति और आधारभूत सुविधाओं पर गंभीरता से काम नहीं हुआ, तो भविष्य में ऐसी त्रासदियां केवल खबरें नहीं रहेंगी, बल्कि विकास की सबसे बड़ी विफलता का प्रमाण बन जाएंगी। विकास तभी सार्थक है जब उसकी रोशनी शहरों की ऊंची इमारतों के साथ-साथ उन गांवों तक भी पहुंचे, जिनकी जमीन पर आधुनिक नोएडा और ग्रेटर नोएडा खड़े हैं। ■

गौतम बुद्ध नगर में सड़क पर हुए अतिक्रमण का एकमात्र विकल्प एलीवेटेड रोड ?

क्या यह नजरिया सही है?

गौतम बुद्ध नगर आज भारत के सबसे तेज़ी से विकसित हो रहे जिलों में गिना जाता है। नोएडा, ग्रेटर नोएडा और यमुना एक्सप्रेसवे क्षेत्र ने पिछले दो दशकों में औद्योगिक निवेश, सूचना प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण, डेटा सेंटर, शिक्षा, स्वास्थ्य और आवासीय विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। आगामी वर्षों में नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट इस जिले को वैश्विक आर्थिक मानचित्र पर और अधिक महत्वपूर्ण स्थान दिलाने वाला है।

किन्तु इस चमकदार विकास के समानांतर एक ऐसी समस्या भी लगातार बढ़ी है, जिसने इस जिले की शहरी व्यवस्था पर गंभीर प्रश्नचिह्न लगा दिया है। यह समस्या है—सड़कों, फुटपाथों और सार्वजनिक मार्गों पर स्थायी अतिक्रमण। एक समय था जब अतिक्रमण अस्थायी माना जाता था; आज अनेक स्थानों पर वह स्थायी स्वरूप ग्रहण कर चुका है। परिणामस्वरूप सड़कें सिकुड़ती गईं, फुटपाथ समाप्त होते गए और यातायात का दबाव बढ़ता गया। ऐसी स्थिति में प्रशासन के सामने बार-बार एक ही विकल्प बचता दिखाई दे रहा है—एलिवेटेड रोड। यह केवल इंजीनियरिंग का समाधान नहीं, बल्कि शहरी नियोजन की एक ऐसी विवशता भी है, जो यह संकेत देती है कि सतह (Surface) पर व्यवस्था कायम रखना कठिन होता जा रहा है।

एक नहीं, अनेक उदाहरण

यदि जिले के प्रमुख मार्गों का अध्ययन किया जाए तो एक समान प्रवृत्ति दिखाई देती है।

1- अगाहपुर–भंगेल एलिवेटेड रोड

दादरी–सूरजपुर–नोएडा मार्ग पर अगाहपुर से भंगेल तक वर्षों से जाम की समस्या बनी हुई थी। सड़क चौड़ी करने, यातायात प्रबंधन और अतिक्रमण हटाने के अनेक प्रयास किए गए, किंतु अपेक्षित सफलता नहीं मिली। अंततः नोएडा प्राधिकरण ने इस खंड पर 4.5 किमी एलिवेटेड रोड का निर्माण कराया। इसके खुलने के बाद ऊपर से गुजरने वाले यातायात को बड़ी राहत मिली और जाम का दबाव कम हुआ।

यह परियोजना यह भी बताती है कि जब सतह पर सुधार सीमित रह जाए, तो यातायात को दूसरे स्तर (ग्रेड सेपरेशन) पर ले जाना पड़ता है।

ग्रेटर नोएडा वेस्ट -शाहबेरी–गाजियाबाद मार्ग

ग्रेटर नोएडा वेस्ट से शाहबेरी होते हुए गाजियाबाद जाने वाला मार्ग लंबे समय से संकरी सड़क, घनी आबादी, अनियोजित निर्माण और अतिक्रमण के कारण बदहाल रहा है। कुछ किलोमीटर की दूरी तय करने में कई बार घंटों का समय लग जाता है। इसी कारण लगभग 3किमी के इस मार्ग पर भी एलिवेटेड कॉरिडोर की योजना पर काम आगे बढ़ाया गया है।

तीसरा उदाहरण: तिलपता चौक–दादरी बाईपास

सूरजपुर–दादरी मार्ग जिले के सबसे व्यस्त मार्गों में से एक है। तिलपता चौक से कंटेनर डिपो और आगे दादरी की ओर जाने वाला हिस्सा वर्षों से जाम, जलभराव और अतिक्रमण का प्रतीक बना हुआ है। बरसात में सड़क कई दिनों तक जलमग्न रहती है और सामान्य दिनों में भी जलभराव के कारण भारी वाहनों तथा स्थानीय यातायात के कारण स्थिति गंभीर रहती है। ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण ने इस लगभग 4 किमी के मार्ग पर एलिवेटेड रोड की दिशा में कदम बढ़ाए हैं। यह निर्णय केवल यातायात सुधार का नहीं, बल्कि इस स्वीकारोक्ति का भी संकेत है कि मौजूदा सड़क पर स्थायी समाधान निकालना अत्यंत कठिन हो गया है।

चौथा उदाहरण : लालकुआँ–दादरी बाईपास (एनएच-91/जीटी रोड)

जिले से होकर गुजरने वाला राष्ट्रीय राजमार्ग भी बढ़ते यातायात, शहरी विस्तार और बरसाती जलभराव के दबाव से जूझ रहा है। इसी पृष्ठभूमि में केंद्रीय सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय ने लालकुआँ से दादरी बाईपास तक लगभग 8 किमी के छह लेन के एलिवेटेड कॉरिडोर के निर्माण की घोषणा की है। यह परियोजना हजारों करोड़ रुपये के निवेश से प्रस्तावित है और इसका उद्देश्य क्षेत्रीय यातायात को निर्बाध बनाना है।

क्या एलिवेटेड रोड समाधान है या व्यवस्था की विवशता?

एलिवेटेड रोड निश्चित रूप से आधुनिक शहरी परिवहन का प्रभावी माध्यम है। इससे यात्रा समय घटता है, सिग्नल कम होते हैं और लंबी दूरी का यातायात तेज़ी से आगे बढ़ता है।

किन्तु एक प्रश्न अवश्य पूछा जाना चाहिए—

क्या हर समस्या का समाधान केवल सड़क को ऊपर उठा देना है? यदि अतिक्रमण, अवैध पार्किंग, अनियोजित व्यावसायिक गतिविधियाँ, फुटपाथों पर कब्ज़ा और भूमि उपयोग के नियमों का उल्लंघन यथावत बना रहे, तो भविष्य में एलिवेटेड रोड के नीचे की सड़कें फिर उसी समस्या से घिर सकती हैं।

भारतीय कहावत है—

"रोग का इलाज नहीं, केवल लक्षण दबाने से बीमारी समाप्त नहीं होती।" यही बात शहरी नियोजन पर भी लागू होती है।

अतिक्रमण क्यों हट नहीं पाता?

यह केवल प्रशासनिक प्रश्न नहीं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक प्रश्न भी है। अतिक्रमण करने वाले अनेक लोगों के लिए वही स्थान उनकी आजीविका और आवास का आधार है। दूसरी ओर वही अतिक्रमण लाखों यात्रियों के समय, ईंधन और सुविधा पर प्रतिदिन भारी बोझ डालता है। जब प्रशासन कार्रवाई करता है तो विरोध होता है। कई मामलों में राजनीतिक समर्थन, स्थानीय दबाव और न्यायिक प्रक्रियाएँ भी कार्रवाई को धीमा कर देती हैं।

परिणाम यह होता है कि सड़कें संकरी होती जाती हैं, फुटपाथ पैदल यात्रियों के लिए अनुपयोगी हो जाते हैं, जाम बढ़ता है, दुर्घटनाओं का जोखिम बढ़ता है, सार्वजनिक संसाधनों पर अतिरिक्त खर्च करना पड़ता है। लोकतंत्र का अर्थ सबकी भागीदारी है, लेकिन यदि सार्वजनिक हित और निजी हित में संतुलन न बनाया जाए, तो उसका सबसे बड़ा नुकसान आम नागरिक को उठाना पड़ता है।

एलिवेटेड रोड का दूसरा पक्ष

एलिवेटेड रोड बनने के बाद सबसे बड़ा प्रश्न नीचे की अर्थव्यवस्था का होता है। आज जिन व्यापारिक प्रतिष्ठानों की गतिविधियाँ सड़क से गुजरने वाले यातायात पर निर्भर हैं, उनके सामने भविष्य में चुनौती खड़ी हो सकती है।

जब मुख्य यातायात ऊपर से गुजरने लगेगा तो नीचे की सड़क पर ग्राहकों की संख्या घट सकती है। यह अनुभव देश के अनेक शहरों में एलिवेटेड कॉरिडोर बनने के बाद देखने को मिला है। यदि इस प्रकार का संकट आता है तो सवाल उठता है कि इसका जिम्मेवार कौन है? इसका नुकसान किसको है? यदि अतिक्रमणकर्ताओं ने सार्वजनिक हित पर निजी हित को वरीयता देने वाला अडिग रवैया न अपनाया गया होता तो स्थिति उनके विरुद्ध न होती।

गौतम बुद्ध नगर को किस मॉडल की आवश्यकता है?

जिला अब केवल एक शहर नहीं रहा; यह राष्ट्रीय और वैश्विक निवेश का केंद्र है। इसलिए यहाँ सड़क निर्माण की सोच भी विश्वस्तरीय होनी चाहिए।

आवश्यकता है कि अतिक्रमण के विरुद्ध स्थायी और निष्पक्ष नीति बने, सड़क बनने के बाद पुनः अतिक्रमण न हो, इसके लिए तकनीकी निगरानी हो, फुटपाथ वास्तव में पैदल यात्रियों के लिए सुरक्षित बनाए जाएँ, जलभराव रोकने के लिए आधुनिक ड्रेनेज प्रणाली विकसित की जाए, सार्वजनिक परिवहन और निजी वाहनों के बीच संतुलन स्थापित किया जाए, बाजारों के लिए नियोजित पार्किंग और लोडिंग-अनलोडिंग क्षेत्र विकसित किए जाएँ।

नीति का मूल प्रश्न

यदि कुछ सालों के अंतराल पर नई एलिवेटेड रोड बनानी पड़े, तो यह विकास की सफलता नहीं, बल्कि शहरी नियोजन की विफलता का संकेत भी हो सकता है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में शासन का मूल उद्देश्य बताते हुए कहा है कि राज्य को ऐसी व्यवस्था बनानी चाहिए जिससे जनजीवन सुचारु रहे और सार्वजनिक संसाधनों का संरक्षण हो। आधुनिक संदर्भ में इसका अर्थ है कि सड़कें, फुटपाथ और सार्वजनिक स्थान किसी एक वर्ग के नहीं, बल्कि पूरे समाज के हैं। डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का एक विचार भी यहाँ प्रासंगिक है—"महान राष्ट्र वही है जो भविष्य की समस्या को आज पहचानकर समाधान तैयार करे।"

सड़कें केवल कंक्रीट नहीं, सभ्यता का आईना हैं

गौतम बुद्ध नगर का विकास भारत की विकासगाथा का महत्वपूर्ण अध्याय है। लेकिन विकास की वास्तविक पहचान केवल ऊँची इमारतों, एक्सप्रेसवे और एलिवेटेड रोड से नहीं होती; वह इस बात से होती है कि आम नागरिक कितनी सहजता से अपने गंतव्य तक पहुँच पाता है। एलिवेटेड रोड निश्चित रूप से आज की आवश्यकता हैं और कई स्थानों पर उन्होंने राहत भी दी है। परंतु यदि उन्हें अतिक्रमण और अव्यवस्थित शहरीकरण का स्थायी विकल्प मान लिया गया, तो भविष्य में और भी महँगी परियोजनाओं की आवश्यकता पड़ेगी।

अंततः प्रश्न केवल यह नहीं है कि नई सड़क कहाँ बनेगी, बल्कि यह है कि मौजूदा सड़क किसकी होगी—जनता की या अतिक्रमण की?

यही वह प्रश्न है जिसका उत्तर गौतम बुद्ध नगर को आने वाले वर्षों में देना होगा। यदि प्रशासन, जनप्रतिनिधि, व्यापारी, स्थानीय नागरिक और प्राधिकरण मिलकर सार्वजनिक हित को प्राथमिकता दें, तो एलिवेटेड रोड विकास का प्रतीक बनेगी; अन्यथा वह केवल उस व्यवस्था की याद दिलाती रहेगी जिसने सतह पर समस्या का समाधान करने के बजाय उसके ऊपर एक नई सड़क बना दी। ■

प्राधिकरणों पर बढ़ता बोझ

क्या सीमित मानव संसाधन बन रहे हैं गौतमबुद्ध नगर के विकास की सबसे बड़ी बाधा?

गौतमबुद्ध नगर आज केवल उत्तर प्रदेश का एक जिला नहीं, बल्कि भारत के सबसे महत्वपूर्ण औद्योगिक, शहरी और निवेश केंद्रों में से एक है। नोएडा, ग्रेटर नोएडा और यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण (YEIDA) का क्षेत्र देश की सबसे महत्वाकांक्षी विकास परियोजनाओं का केंद्र बन चुका है। नोएडा अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट, फिल्म सिटी, मेडिकल डिवाइस पार्क, लॉजिस्टिक्स हब, डेटा सेंटर, इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण, आवासीय टाउनशिप और औद्योगिक निवेश जैसी परियोजनाओं ने इस क्षेत्र को राष्ट्रीय विकास के मानचित्र पर अग्रणी स्थान दिलाया है। वहीं दिल्ली मुंबई इंडस्ट्रियल कॉरिडोर जैसी अति महत्वपूर्ण योजनाएं यह प्रस्तावित है साथ ही न्यू नोएडा और ग्रेटर नोएडा फेस 2 भी यहां प्रस्तावित है। लेकिन इस चमकदार विकास यात्रा का एक दूसरा पक्ष भी है। विकास की गति जितनी तेज हुई है, प्रशासनिक चुनौतियां भी उतनी ही जटिल होती गई हैं। आज सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि क्या विकास प्राधिकरणों के पास अपने लगातार बढ़ते दायित्वों के अनुरूप पर्याप्त मानव संसाधन उपलब्ध हैं?

विकास का विस्तार, लेकिन प्रशासनिक ढांचा लगभग स्थिर

पिछले एक दशक में नोएडा, ग्रेटर नोएडा और यमुना प्राधिकरण का क्षेत्र लगातार विस्तारित हुआ है। नए गांव अधिसूचित हुए, नई आवासीय और औद्योगिक परियोजनाएं शुरू हुईं, भूमि अधिग्रहण बढ़ा और लाखों करोड़ो वर्गमीटर भूमि का प्रबंधन इन संस्थाओं के जिम्मे आया। लेकिन दूसरी ओर अधिकारियों और कर्मचारियों की संख्या उसी अनुपात में नहीं बढ़ सकी। सार्वजनिक रिपोर्टों के अनुसार, नोएडा और ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरणों में लगभग 40 प्रतिशत पद रिक्त हैं, जिसके कारण कई विभाग सीमित कर्मचारियों के सहारे काम कर रहे हैं। ग्रेटर नोएडा का लैंड और प्लानिंग विभाग अधिकारियों और कर्मचारियों कि भारी कमी से जूझ रहा है। इन प्राधिकारणों के वरिष्ठ अधिकारियों ने स्वयं भी राज्य सरकार से पर्याप्त स्टाफ उपलब्ध कराने का अनुरोध किया है। इसी प्रकार, यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण (YEIDA) में भी स्थिति गंभीर रही है। वर्ष 2025 की रिपोर्ट के अनुसार 257 स्वीकृत पदों में केवल 85 नियमित पद भरे हुए थे, जबकि बड़ी संख्या में कार्य आउटसोर्स या संविदा कर्मियों के माध्यम से संचालित किए जा रहे थे।

जिम्मेदारी बढ़ी, कर्मचारी नहीं

किसी भी संस्था की कार्यक्षमता केवल उसके

अधिकारों से नहीं, बल्कि उसके संसाधनों से तय होती है। आज इन प्राधिकरणों को एक साथ अनेक मोर्चों पर काम करना पड़ता है। भूमि अधिग्रहण, किसानों के मुआवजे और पुनर्वास से जुड़े मामले, सेक्टरों का विकास एवं रखरखाव, सड़क, पार्क, सीवर और जल निकासी, अवैध निर्माण रोकना, अतिक्रमण हटाना, अवैध कॉलोनियों पर कार्रवाई, भवन मानचित्र स्वीकृति, निवेश परियोजनाओं की निगरानी, न्यायालयों में चल रहे हजारों मुकदमों का प्रबंधन और नागरिक शिकायतों का निस्तारण। इन सबके लिए प्रशिक्षित और पर्याप्त मानव संसाधन आवश्यक हैं। जब एक अधिकारी कई विभागों का अतिरिक्त प्रभार संभालता है, तो निर्णय प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से प्रभावित होती है।

अवैध कॉलोनियां: केवल कानून-व्यवस्था नहीं, संसाधनों का भी प्रश्न

गौतमबुद्ध नगर में पिछले कुछ वर्षों में अवैध कॉलोनियों और अनधिकृत निर्माण का विस्तार प्रशासन के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक बनकर उभरा है। विशेष रूप से नोएडा अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट के आसपास भूमि की कीमतों में तेजी आने के बाद भू-माफिया और अवैध कॉलोनाइजरों की गतिविधियां बढ़ीं। नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण के लगभग सभी सर्किलों में अवैध निर्माण और अतिक्रमण की भारी समस्या है। वहीं ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण में प्राधिकरण की अधिसूचित और अधिग्रहित जमीन का बड़ा हिस्सा अतिक्रमण और अवैध निर्माण की भेंट चढ़ रहा है। कई बार प्राधिकरणों ने करोड़ों रुपये मूल्य की सरकारी भूमि पर बने अवैध निर्माण हटाए और बड़े पैमाने पर कार्रवाई की। पर्याप्त निगरानी के भाव में अतिक्रमण भी उतनी तेजी से हुआ है। फिर भी प्रश्न यह है कि यदि समय रहते निगरानी हो जाती, तो क्या ये अवैध कॉलोनियां विकसित ही हो पातीं? इसका उत्तर केवल प्रशासनिक इच्छाशक्ति में नहीं, बल्कि निगरानी के लिए उपलब्ध जनशक्ति में भी छिपा है।

कार्रवाई के समय सबसे बड़ी चुनौती

प्राधिकरण की टीमें जब अतिक्रमण हटाने या अवैध निर्माण ध्वस्त करने पहुंचती हैं, तो कई बार उन्हें स्थानीय विरोध, तनावपूर्ण स्थिति और कानून-व्यवस्था की चुनौती का सामना करना पड़ता है। ऐसे अभियानों में पुलिस बल, राजस्व विभाग और प्राधिकरण के अभियंताओं के बीच समन्वय आवश्यक होता है। लेकिन जब सीमित कर्मचारी विशाल क्षेत्र की निगरानी कर रहे हों, तब नियमित निरीक्षण कठिन हो जाता है। परिणामस्वरूप अवैध निर्माण प्रारंभिक अवस्था में नहीं रुक पाते और बाद में बड़ी कार्रवाई करनी बड़ी चुनौती बन जाती है। यहां बसने वाले बड़े वोट बैंक के कारण राजनीतिक दलों और जन प्रतिनिधि का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष दबाव का भी सामना करना पड़ता है ऐसे में प्राधिकरण को कार्रवाई की प्राथमिकताएं तय करनी पड़ती है।

प्राधिकरण भी पूरी तरह दोषमुक्त नहीं

मानव संसाधनों की कमी वास्तविक चुनौती है, लेकिन यह प्राधिकरणों की हर कमी का औचित्य नहीं बन सकती। समय-समय पर प्राधिकरणों पर भ्रष्टाचार, लापरवाही, निर्णयों में विलंब, शिकायतों की अनदेखी और नियमों के असमान अनुपालन जैसे आरोप भी लगे हैं। कुछ मामलों में न्यायालयों ने भी प्राधिकरणों की कार्यप्रणाली पर गंभीर टिप्पणियां की हैं। इसलिए समस्या का विश्लेषण संतुलित होना चाहिए। जहां संसाधनों की कमी है, वहीं जवाबदेही और पारदर्शिता भी उतनी ही आवश्यक है।

केवल भर्ती नहीं, प्रशासनिक सुधार भी जरूरी

यदि वास्तव में विकास की गति बनाए रखनी है, तो केवल नए पद सृजित करना पर्याप्त नहीं होगा। आवश्यक है कि रिक्त पदों को शीघ्र भरा जाए। तकनीक आधारित निगरानी (GIS, ड्रोन, सैटेलाइट मैपिंग) को व्यापक बनाया जाए। प्रत्येक क्षेत्र के लिए जवाबदेह अधिकारी निर्धारित हों। अवैध निर्माण की शुरुआती सूचना देने की स्थानीय प्रणाली विकसित हो। नागरिक शिकायतों के निस्तारण की समयबद्ध डिजिटल व्यवस्था लागू हो और संबंधित विभागों के बीच समन्वय मजबूत किया जाए।

गौतमबुद्ध नगर का भविष्य केवल ऊंची इमारतों, एक्सप्रेसवे और निवेश सम्मेलनों से तय नहीं होगा। उसकी वास्तविक सफलता इस बात से मापी जाएगी कि विकास संस्थाएं अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन कितनी दक्षता, पारदर्शिता और संवेदनशीलता से करती हैं। यह स्वीकार करना होगा कि आज प्राधिकरणों पर कार्य का दबाव पहले की तुलना में कई गुना बढ़ चुका है और कई रिपोर्टें भी बताती हैं कि वे लंबे समय से कर्मचारियों की कमी से जूझ रहे हैं। लेकिन यह भी उतना ही सत्य है कि जनता का मूल्यांकन उपलब्ध संसाधनों से नहीं, बल्कि परिणामों से होता है। नागरिक को यह नहीं दिखता कि कितने पद रिक्त हैं; वह यह देखता है कि सड़क कब बनेगी, अतिक्रमण कब हटेगा, अवैध कॉलोनी कब रुकेगी, किसान की समस्या कब सुलझेगी और उसकी शिकायत का समाधान कब होगा? इसलिए समाधान किसी एक पक्ष में नहीं, बल्कि पर्याप्त मानव संसाधन, आधुनिक तकनीक, स्पष्ट जवाबदेही और भ्रष्टाचार पर कठोर नियंत्रण—इन चार स्तंभों में निहित है। यदि उत्तर प्रदेश सरकार प्राधिकरणों को उनकी बढ़ती जिम्मेदारियों के अनुरूप अधिकारी और कर्मचारी उपलब्ध कराती है तथा प्राधिकरण भी पारदर्शी और उत्तरदायी कार्य संस्कृति अपनाते हैं, तो गौतमबुद्ध नगर केवल विकास का मॉडल ही नहीं, बल्कि सुशासन का भी राष्ट्रीय उदाहरण बन सकता है। ■

जेवर एयरपोर्ट को लेकर भाजपा में श्रेय की राजनीति

नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट के निर्माण के साथ-साथ गौतमबुद्ध नगर भाजपा के भीतर भी एक समानांतर राजनीतिक कथा आकार लेती रही है। यह कथा एयरपोर्ट निर्माण के श्रेय को लेकर चली राजनीतिक प्रतिस्पर्धा की है। लंबे समय से भाजपा के दो प्रभावशाली गुट इस महत्वाकांक्षी परियोजना का अधिकाधिक श्रेय अपने पक्ष में स्थापित करने का प्रयास करते रहे। यह प्रतिस्पर्धा केवल राजनीतिक दावों तक सीमित नहीं रही, बल्कि कई अवसरों पर दोनों पक्षों ने अपने आचरण और सार्वजनिक गतिविधियों के माध्यम से भी एक-दूसरे पर बढ़त लेने का प्रयास किया। अनेक अवसरों पर राजनीतिक शिष्टाचार भी इस प्रतिस्पर्धा की भेंट चढ़ता दिखाई दिया। किंतु मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के एक सार्वजनिक वक्तव्य ने इस पूरी बहस को एक नया आयाम दे दिया।

दरअसल, जेवर में अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट स्थापित करने का विचार कोई नया नहीं था। पिछले दो दशकों से यह प्रस्ताव विभिन्न स्तरों पर चर्चा का विषय रहा, किंतु लंबे समय तक यह केवल एक महत्वाकांक्षी योजना बनकर ही रह गया। परिस्थितियाँ वर्ष 2014 में बदलीं, जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) की सरकार बनी। गौतमबुद्ध नगर से सांसद डॉ. महेश शर्मा को संस्कृति एवं पर्यटन मंत्रालय का राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) तथा नागरिक उड्डयन मंत्रालय में राज्य मंत्री का दायित्व मिला। इसी कालखंड में जेवर एयरपोर्ट परियोजना को नीतिगत स्तर पर नई गति प्राप्त हुई। केंद्र सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के बीच समन्वय स्थापित करने, आवश्यक अनुमतियाँ दिलाने तथा परियोजना के समक्ष मौजूद प्रशासनिक एवं नीतिगत अवरोधों को दूर कराने में डॉ. महेश शर्मा की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है।

नीतिगत स्वीकृतियाँ मिलने के बाद सबसे बड़ी चुनौती भूमि अधिग्रहण की थी। उस समय उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी की सरकार थी और विभिन्न कारणों से परियोजना अपेक्षित गति प्राप्त नहीं कर सकी। वर्ष 2017 में उत्तर प्रदेश में भारतीय जनता पार्टी की सरकार बनी और योगी आदित्यनाथ मुख्यमंत्री बने। इसी चुनाव में कांग्रेस छोड़कर भाजपा में शामिल हुए ठाकुर धीरेंद्र सिंह जेवर विधानसभा क्षेत्र से विधायक निर्वाचित हुए। केंद्र और राज्य—दोनों स्तरों पर एक ही दल की सरकार होने से परियोजना को निर्णायक गति मिली।

भूमि अधिग्रहण का दायित्व यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण (यीडा) के पास था। किसानों को अपनी भूमि परियोजना के लिए उपलब्ध कराने हेतु तैयार करना सरल कार्य नहीं था। राज्य सरकार, यीडा तथा स्थानीय प्रशासन ने किसानों के साथ लगातार संवाद स्थापित किया। इस प्रक्रिया में स्थानीय विधायक धीरेंद्र सिंह ने भी किसानों के बीच जाकर संवाद किया और उन्हें सरकार की नीतियों तथा मुआवजा व्यवस्था के प्रति आश्वस्त करने का प्रयास किया। जैसे-जैसे एयरपोर्ट परियोजना मूर्त रूप लेने लगी, वैसे-वैसे भाजपा के भीतर श्रेय की राजनीति भी तेज होती गई। एक पक्ष का तर्क रहा कि यदि केंद्र स्तर पर डॉ. महेश शर्मा नीतिगत बाधाएँ दूर नहीं कराते, तो यह परियोजना कभी आगे नहीं बढ़ पाती। वहीं दूसरा पक्ष यह दावा करता रहा कि यदि स्थानीय स्तर पर किसानों का विश्वास अर्जित नहीं किया जाता, तो एयरपोर्ट केवल कागज़ों तक ही सीमित रह जाता। सोशल मीडिया पर दोनों पक्षों के समर्थकों ने अपने-अपने नेताओं को परियोजना का सबसे बड़ा सूत्रधार सिद्ध करने का अभियान चलाया। विशेष रूप से विधायक धीरेंद्र सिंह ने लगातार एयरपोर्ट निर्माण की प्रगति, नई जानकारियों और गतिविधियों को सोशल मीडिया पर शेयर करने में खूब रूचि दिखाई। अनेक अवसरों

पर निर्माण एजेंसी अथवा संबंधित अधिकारियों की औपचारिक घोषणाओं से पहले भी एयरपोर्ट से जुड़ी सूचनाएँ उनके माध्यम से सार्वजनिक हुईं। इससे आम जनमानस में यह धारणा बनने लगी कि एयरपोर्ट परियोजना के स्थानीय संचालन और प्रगति का नेतृत्व वही कर रहे हैं। राजनीतिक विश्लेषकों ने इसे श्रेय की प्रतिस्पर्धा में बढ़त बनाने की एक रणनीति के रूप में भी देखा।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा एयरपोर्ट के उद्घाटन के अवसर पर एक नया राजनीतिक विवाद सामने आया। उद्घाटन शिलापट्ट पर स्थानीय सांसद डॉ. महेश शर्मा का नाम अंकित था, जबकि विधायक धीरेंद्र सिंह का नाम उसमें शामिल नहीं था। इसे लेकर विधायक के समर्थकों ने सार्वजनिक रूप से असंतोष भी व्यक्त किया। इसके कुछ समय बाद पहली व्यावसायिक उड़ान का कार्यक्रम भी मुख्यतः विधायक धीरेंद्र सिंह केंद्रित दिखाई दिया। विरोधी गुट के अनेक नेताओं को कार्यक्रम में अपेक्षित महत्व नहीं मिला। राजनीतिक गलियारों में यह चर्चा शुरू हुई कि मानो धीरेंद्र सिंह और एयरपोर्ट एक-दूसरे के पर्याय बन गए हों। बाद में एयरपोर्ट परिसर में यात्रियों से बातचीत करते हुए उनके कई वीडियो भी सोशल मीडिया पर सामने आए।

इन घटनाओं ने ऐसी धारणा को और बल दिया कि एयरपोर्ट से जुड़ी राजनीतिक पहचान का केंद्र स्थानीय स्तर पर धीरेंद्र सिंह बनते जा रहे हैं। उस समय विपक्षी गुट की अपेक्षाकृत शांत प्रतिक्रिया से यह संदेश भी गया कि श्रेय की इस प्रतिस्पर्धा में फिलहाल धीरेंद्र सिंह बढ़त बनाए हुए हैं। हालाँकि यह स्थिति अधिक समय तक कायम नहीं रही। कुछ ही समय बाद नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर सांसद डॉ. महेश शर्मा के नेतृत्व में आवास समिति की बैठक आयोजित हुई। इस बैठक में गौतमबुद्ध नगर के अधिकांश जनप्रतिनिधि, भाजपा संगठन के पदाधिकारी तथा बुलंदशहर और अलीगढ़ के जनप्रतिनिधि उपस्थित रहे, जबकि विधायक धीरेंद्र सिंह इसमें अनुपस्थित रहे। राजनीतिक हलकों में इस अनुपस्थिति को लेकर विभिन्न प्रकार की चर्चाएँ हुईं। अनेक विश्लेषकों ने इसे पहली व्यावसायिक उड़ान के आयोजन के बाद भाजपा के दूसरे गुट की राजनीतिक सक्रियता तथा संगठन के भीतर शक्ति-संतुलन का संकेत माना।

इन घटनाओं ने यह स्पष्ट कर दिया कि नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट अब केवल विकास का प्रतीक नहीं रहा, बल्कि भाजपा की स्थानीय राजनीति का भी एक महत्वपूर्ण प्रतीक बन चुका है। इसके श्रेय को लेकर दोनों गुटों के बीच मनोवैज्ञानिक प्रतिस्पर्धा लगातार गहराती गई और राजनीतिक पर्यवेक्षकों की निगाहें इस बात पर टिक गईं कि अगली राजनीतिक चाल किस पक्ष की ओर से चली जायेगी?

इसी बीच 18 जुलाई को बुलंदशहर में आयोजित एक कार्यक्रम में मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने अपने संबोधन के दौरान कहा— "जेवर एयरपोर्ट भले ही डॉ. महेश शर्मा द्वारा जेवर में बनवाया गया हो, लेकिन इसका सबसे अधिक लाभ बुलंदशहर को मिलेगा। यह एयरपोर्ट पूरे पश्चिमी उत्तर प्रदेश और भारत की समृद्धि का आधार बनेगा।" मुख्यमंत्री का यह वक्तव्य राजनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा रहा है। जब भाजपा के भीतर एयरपोर्ट निर्माण के श्रेय को लेकर लंबे समय से मनोवैज्ञानिक प्रतिस्पर्धा चल रही थी, तब मुख्यमंत्री ने सार्वजनिक मंच से डॉ. महेश शर्मा के नाम का उल्लेख करते हुए उन्हें इस परियोजना से जोड़ा। राजनीतिक विश्लेषकों का मानना है कि यह केवल औपचारिक प्रशंसा भर नहीं थी, बल्कि इसने श्रेय संबंधी बहस को नई दिशा दे दी। विशेष महत्व इसलिए भी माना जा रहा है क्योंकि राजनीतिक हलकों में यह धारणा लंबे समय से रही है कि विधायक धीरेंद्र सिंह स्वयं को मुख्यमंत्री का निकटस्थ मानते हैं। निस्संदेह, नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट जैसी विशाल और बहुआयामी परियोजना का श्रेय किसी एक व्यक्ति को देना उचित नहीं होगा। ऐसी परियोजनाएँ केंद्र और राज्य सरकारों, प्रशासन, स्थानीय जनप्रतिनिधियों, अधिकारियों, किसानों तथा अनेक संस्थाओं के सामूहिक प्रयासों का परिणाम होती हैं।

किंतु राजनीति का स्वभाव यही है कि विकास की प्रत्येक बड़ी उपलब्धि अंततः श्रेय की राजनीति का विषय बन जाती है। गौतमबुद्ध नगर भाजपा में भी यही परिदृश्य देखने को मिला। फिर भी, मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के 18 जुलाई के सार्वजनिक वक्तव्य ने इस पूरे विमर्श को नया राजनीतिक संदर्भ अवश्य प्रदान किया है। राजनीतिक हलकों में इसे एक ऐसे संदेश के रूप में देखा जा रहा है, जिसने लंबे समय से चली आ रही श्रेय की प्रतिस्पर्धा को निर्णायक मोड़ दे दिया। आने वाले समय में इतिहास इस परियोजना का मूल्यांकन केवल इस आधार पर नहीं करेगा कि किस नेता ने कितनी सक्रिय उपस्थिति दर्ज कराई, बल्कि इस आधार पर भी करेगा कि परियोजना के विभिन्न चरणों में किसकी भूमिका क्या रही और उसे सार्वजनिक एवं राजनीतिक स्तर पर किस प्रकार किसकी भूमिका को किसने स्वीकार किया। ■

दादरी: समृद्ध इतिहास, उपेक्षित वर्तमान और अनिश्चित भविष्य, दोषी कौन?

गौतम बुद्ध नगर जिले की पहचान आज दुनिया में नोएडा, ग्रेटर नोएडा, यमुना एक्सप्रेसवे और नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट जैसी महत्वाकांक्षी परियोजनाओं से है। लेकिन विडंबना यह है कि जिस दादरी और आसपास की जमीन पर इस जिले की नींव रखी गई, वही क्षेत्र आज विकास की मुख्यधारा से सबसे अधिक कटता दिखाई दे रहा है। हालांकि इस क्षेत्र को ग्रेटर नोएडा के मास्टर प्लान 2041 में शामिल किया गया है।

इसके बावजूद सबसे बड़ा सवाल यह है कि जब नोएडा और ग्रेटर नोएडा चमके फिर दादरी क्षेत्र क्यों पिछड़ रहा है ? जिले के एक हिस्से में नियोजित विकास, दूसरे के हिस्से में मूलभूत सुविधाओं से रहित स्लम बस्तियों जैसी अवैध कॉलोनियाँ क्यों? और जब तक ग्रेटर नोएडा के मास्टर 2041 प्लान पर काम शुरू किया जाएगा तब क्या प्राधिकरण को निर्विवाद भूमि मिल सकेगी जबकि यहां तेजी से अवैध निर्माण और अवैध कॉलोनियों का जाल बिछ रहा है? 1857 की क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला दादरी क्षेत्र कभी आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र था।

1997 में गौतम बुद्ध नगर जिले के गठन के समय दादरी तहसील जिले का सबसे मजबूत आधार मानी जाती थी। प्रदेश की सर्वाधिक राजस्व देने वाली तहसीलों में शुमार दादरी के लोगों को उम्मीद थी कि नया जिला बनने के साथ यह क्षेत्र भी नियोजित विकास का मॉडल बनेगा। लेकिन तीन दशक बाद तस्वीर बिल्कुल उलट दिखाई देती है। दादरी क्षेत्र के आधे हिस्से के रूप में जहां नोएडा और ग्रेटर नोएडा वेस्ट ने विश्वस्तरीय आधारभूत ढांचे, उद्योग, आवासीय सेक्टर और निवेश के नए आयाम स्थापित किए, वहीं रेलवे लाइन के उत्तर दिशा में दादरी और आसपास का बड़ा भूभाग आज भी स्पष्ट विकास नीति का इंतजार कर रहा है। भले ही इसका नाम "फेस-2" दे दिया गया, लेकिन आज तक उसके अनुरूप विकास की ठोस रूपरेखा जमीन पर नहीं उतर सकी।

यही नीति-शून्यता अब क्षेत्र की सबसे बड़ी

समस्या बन चुकी है। नियोजित विकास के अभाव में भूमाफिया और अवैध कॉलोनाइजर सक्रिय हो गए हैं। गाजियाबाद सीमा से सटे छपरौला से लेकर बुलंदशहर सीमा तक सैकड़ों गांवों के आसपास बिना सड़क, सीवर, जलनिकासी, पेयजल और अन्य मूलभूत सुविधाओं के अवैध कॉलोनियों का जाल फैल चुका है।

जिले का यह इलाका अनियोजित स्लम शहरीकरण का सबसे बड़ा उदाहरण बनता जा रहा है। परिणामस्वरूप आज यह क्षेत्र प्रदेश के सबसे अधिक अवैध और कच्ची कॉलोनियों वाले क्षेत्र में शामिल है। जानकारों का कहना है कि ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण ने किसानों को बेहतर मुआवजा देकर भूमि अधिग्रहण और लैंड बैंक बढ़ाने का प्रस्ताव शासन को भेजा था, ताकि दादरी क्षेत्र को भी नियोजित विकास से जोड़ा जा सके। लेकिन प्रस्ताव को स्वीकृति नहीं मिली। परिणाम यह हुआ कि निजी कॉलोनाइजर किसानों से प्राधिकरण से ऊंचे दामों पर जमीन खरीदकर मनमाने ढंग से प्लॉटिंग कर रहे हैं और क्षेत्र की विकास संभावनाएं अव्यवस्थित बसावट में बदलती जा रही हैं।

विडंबना यह भी है कि जिले में नोएडा, ग्रेटर नोएडा, यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण और अब न्यू नोएडा कई नई योजनाओं पर तेजी से काम हो रहा है, लेकिन दादरी का बड़ा भूभाग आज भी विकास के नक्शे पर धुंधला दिखाई देता है। ऐसा लगता है मानो जिले के अन्य क्षेत्रों के विकास की कीमत दादरी चुका रहा हो। स्थानीय लोगों का दर्द भी यही है कि जिस क्षेत्र ने जिले को पहचान दी, वही आज अपने अस्तित्व और संतुलित विकास के लिए संघर्ष कर रहा है। यदि समय रहते इस क्षेत्र के लिए समग्र मास्टर प्लान, भूमि अधिग्रहण, जमीन क्रय अथवा लैंड पुलिंग या कोई अन्य नीति और आधारभूत सुविधाओं के विकास पर ठोस निर्णय नहीं लिए गए, तो दादरी आने वाले वर्षों में अनियोजित बस्तियों और अवैध निर्माण के ऐसे जाल में फंस जाएगा, जहां से व्यवस्थित विकास की राह और कठिन हो जाएगी।

दादरी आज केवल एक क्षेत्र नहीं, बल्कि शासन की विकास नीति के उस विरोधाभास का प्रतीक बन चुका है, जहां एक ही जिले का एक हिस्सा स्मार्ट सिटी बनने की ओर बढ़ रहा है और दूसरा हिस्सा बुनियादी सुविधाओं के लिए संघर्ष कर रहा है। ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो यह क्षेत्र सरकार के नियोजित विकास के एजेंडे और प्राधिकरण की प्राथमिकताओं से बाहर है।

लेकिन बड़ा सवाल यही है कि भौगोलिक स्थिति और संसाधनों की प्रबलता के चलते जिस क्षेत्र को नियोजित विकास के लिए प्राथमिकता मिलनी चाहिए थी उसके प्रति शासन सत्ता और प्राधिकरण उदासीन क्यों है? दादरी क्षेत्र उत्तर प्रदेश के सबसे विकसित और नियोजित जिले का वह हिस्सा है जहां विकास की राह आज भी अधूरी है। कुल मिलाकर दादरी क्षेत्र की वर्तमान दशा सरकार के द्वारा गौतम बुद्ध नगर के लिए चुने गए विकास मॉडल और सौतेले व्यवहार पर गंभीर सवाल खडे करती है। ■

गौतमबुद्ध नगर में पुलिस कमिश्नरेट व्यवस्था

क्यों बदला पुलिसिंग का पूरा ढांचा?

अपराध, औद्योगिक विस्तार और महानगरीय चुनौतियों के बीच जन्मी एक नई व्यवस्था

जब शहर महानगर बन जाता है, तो केवल सड़कें और इमारतें ही नहीं बदलतीं; कानून-व्यवस्था की संरचना भी बदलनी पड़ती है।" उत्तर प्रदेश के मानचित्र पर गौतमबुद्ध नगर एक ऐसा जिला है, जिसने कुछ ही दशकों में ग्रामीण भूगोल से निकलकर वैश्विक निवेश, सूचना प्रौद्योगिकी, बहुराष्ट्रीय कंपनियों, एक्सप्रेस-वे, मेट्रो, डेटा सेंटर और अब अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे तक की यात्रा तय की है। लेकिन विकास जितनी तेजी से आगे बढ़ा, कानून-व्यवस्था की चुनौतियाँ भी उतनी ही जटिल होती चली गईं यही वह पृष्ठभूमि थी जिसने उत्तर प्रदेश सरकार को गौतमबुद्ध नगर में पारंपरिक जिला पुलिस व्यवस्था के स्थान पर पुलिस कमिश्नरेट प्रणाली लागू करने जैसा अहम निर्णय लेना पड़ा। हालांकि यह बहुत आसान नहीं था। शुरुआती चरण में पेश आई चुनौतियों ने इस फैसले पर सवाल भी खडे किए थे।

उत्तर प्रदेश सरकार ने 13 जनवरी 2020 को गौतमबुद्ध नगर और लखनऊ में पुलिस कमिश्नरेट प्रणाली लागू करने की घोषणा की। इसके बाद गौतमबुद्ध नगर में पहले पुलिस आयुक्त (Commissioner of Police) के रूप में वरिष्ठ आईपीएस अधिकारी आलोक सिंह ने कार्यभार संभाला। मार्च 2020 में सेक्टर-108 स्थित पुलिस आयुक्त कार्यालय का उद्घाटन मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने किया। उन्होंने इसे "समय की आवश्यकता" बताते हुए कहा कि तेजी से विकसित हो रहे इस क्षेत्र के लिए अधिक सक्षम और त्वरित निर्णय लेने वाली पुलिस व्यवस्था आवश्यक थी। वर्तमान में वरिष्ठ आईपीएस अधिकारी श्रीमती लक्ष्मीसिंह गौतम बुद्ध पुलिस कमिश्नरेट की बागडोर संभाल रही हैं।

गौतम बुद्ध नगर पुलिस कमिश्नरेट को लेकर सवाल उठता है इसके लिए क्या केवल अपराध कारण थे? इस प्रश्न का उत्तर है—नहीं।कमिश्नरेट व्यवस्था केवल अपराध बढ़ने की प्रतिक्रिया नहीं थी, बल्कि तेजी से महानगर बन रहे क्षेत्र की बदलती आवश्यकताओं का प्रशासनिक उत्तर भी थी। उस समय तक यहां लाखों की दैनिक आबादी का आवागमन, दिल्ली से सीधी भौगोलिक सीमा, हजारों औद्योगिक इकाइयाँ, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, विशाल आईटी सेक्टर, मेट्रो नेटवर्क, यमुना एक्सप्रेस-वे, जेवर स्थित अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट, तेजी से विस्तार लेता हुआ रियल एस्टेट निवेश तथा अंतरराष्ट्रीय निवेशकों की बढ़ती उपस्थिति ने कानून-व्यवस्था को पारंपरिक जिला पुलिस व्यवस्था से कहीं अधिक जटिल बना दिया था। बढ़ते नगरीकरण के कारण अपराध की प्रकृति में तेजी से बदलाव हो रहा था। वही तेजी से बढ़ते अपराधीकरण के कारण निवेदक पलायन कर रहे थे। सरकार का मानना था कि ऐसे महानगरीय जिले में पुलिस को अधिक प्रशासनिक और कानूनी

अधिकार देकर निर्णय प्रक्रिया तेज करनी होगी।

दरअसल, कहते है कि विकास के समानंतर अपराध भी साथ चलता है।गौतमबुद्ध नगर जिला अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यहां जितनी तेजी से विकास हो रहा था उतनी ही तेजी से गैरकानूनी धंधे भी फल फूल रहे थे। लंबे समय तक जिला संगठित अपराध, भूमि विवाद और महानगरीय अपराधों का केंद्र बना रहा। विभिन्न वर्षों में सामने आए प्रमुख अपराधों और चुनौतियों ने यह संकेत दिया कि पारंपरिक पुलिस ढांचे को आधुनिक स्वरूप देने की आवश्यकता है। विकास के साथ गौतम बुद्ध नगर में जमीनी विवाद एवं एवं अपराध तेजी से बढ़ने लगे।नोएडा और ग्रेटर नोएडा के तीव्र शहरी विस्तार के साथ भूमि की कीमतों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। इसके साथ ही भू-माफिया, फर्जी रजिस्ट्री, अवैध कब्जे और बिल्डर विवाद जैसी समस्याएँ तेजी से बढ़ीं। कुख्यात आपराधिक गिरोहओं के लिए भी यह जिला अपार सम्भावनाओं वाला बन गया। पश्चिमी उत्तर प्रदेश सहित उत्तर प्रदेश के कई कुख्यात गिरोहों की गतिविधियाँ नोएडा और ग्रेटर नोएडा तक फैल चुकी थीं। रंगदारी, अवैध वसूली, सुपारी हत्या और गैंगवार जैसी घटनाएँ पुलिस के लिए बड़ी चुनौती थीं। यहां महिलाओं के लिए परम्परागत अपराधों के साथ नए प्रकार के अपराधों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी।महानगरीय क्षेत्र होने के कारण बड़ी संख्या में छात्राएँ और कामकाजी महिलाएँ यहाँ रहती हैं। महिलाओं की सुरक्षा, छेड़छाड़, साइबर उत्पीड़न और त्वरित पुलिस प्रतिक्रिया की आवश्यकता लगातार महसूस की जा रही थी। देश की आईटी राजधानी के रूप में

विकसित हो रहे नोएडा और ग्रेटर नोएडा में साइबर ठगी, ऑनलाइन बैंकिंग अपराध, डिजिटल फ्रॉड और कॉर्पोरेट डेटा अपराधों में लगातार वृद्धि हो रही थी।

औद्योगिक और कॉर्पोरेट सुरक्षा के लिहाज से भी यह जिला अहम है। यहां हजारों औद्योगिक इकाइयों, विदेशी कंपनियों और महत्वपूर्ण आर्थिक परिसंपत्तियों की सुरक्षा पारंपरिक पुलिस व्यवस्था के लिए नई चुनौती बन चुकी थी।

वर्तमान में गौतम बुद्ध नगर वीआईपी सुरक्षा और अंतरराष्ट्रीय महत्व का केंद्र बन चुका है। प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, विदेशी प्रतिनिधिमंडल, निवेशक सम्मेलन, अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनियाँ और बड़े औद्योगिक आयोजन नियमित रूप से होने लगे थे। ऐसे आयोजनों के लिए त्वरित निर्णय लेने वाली पुलिस प्रणाली की आवश्यकता महसूस की गई।

कमिश्नरेट व्यवस्था की अपनी विशेषताएं होती हैं। पहले कई प्रशासनिक शक्तियाँ जिला मजिस्ट्रेट के पास होती थीं। कमिश्नरेट व्यवस्था लागू होने के बाद इन शक्तियों का बड़ा हिस्सा पुलिस आयुक्त को प्राप्त हो गया। इससे संवेदनशील परिस्थितियों में त्वरित निर्णय, कानून-व्यवस्था पर तत्काल कार्रवाई, बड़े आयोजनों के लिए शीघ्र अनुमति, संगठित अपराध पर प्रभावी नियंत्रण तथा आधुनिक महानगरीय पुलिसिंग को गति मिली। गौतम बुद्ध नगर में कमिश्नरेट व्यवस्था लागू करने का यही मूल उद्देश्य भी था। वहीं, जब नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट परियोजना ने गति पकड़ी, तब यह स्पष्ट हो गया कि भविष्य में गौतमबुद्ध नगर देश के सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक और रणनीतिक जिलों में शामिल होगा। जहां सुरक्षा व्यवस्था भी विशेष प्रकार की होगी। एयरपोर्ट, एक्सप्रेस-वे, डेटा सेंटर, फिल्म सिटी और औद्योगिक निवेशों की सुरक्षा के लिए विशेषीकृत पुलिस व्यवस्था की आवश्यकता और अधिक महत्वपूर्ण हो गई। इसी क्रम में बाद के वर्षों में एयरपोर्ट क्षेत्र के लिए विशेष पुलिस संरचना विकसित करने की दिशा में भी कदम उठाए गए। कमिश्नरेट व्यवस्था लागू होने के बाद पुलिस ने संगठित अपराध, गैंगस्टर एक्ट, माफिया के विरुद्ध संपत्ति कुर्की, साइबर अपराध नियंत्रण, महिला सुरक्षा और तकनीकी पुलिसिंग पर विशेष ध्यान दिया। सार्वजनिक शिकायतों के निस्तारण, डिजिटल निगरानी, त्वरित प्रतिक्रिया प्रणाली तथा आधुनिक पुलिसिंग मॉडल के कारण गौतमबुद्ध नगर कई प्रशासनिक मानकों पर बेहतर प्रदर्शन करने वाले जिलों में शामिल हुआ।

क्या चुनौतियाँ अभी भी शेष हैं?

कमिश्नरेट व्यवस्था कोई जादुई समाधान नहीं है। आज भी साइबर अपराध, आर्थिक अपराध, अंतरराज्यीय गिरोह, ट्रैफिक प्रबंधन, अवैध निर्माण, भूमि विवाद, डिजिटल ठगी और तेजी से बढ़ती आबादी पुलिस के सामने बड़ी चुनौतियाँ हैं। महानगर जितनी तेजी से विकसित होगा, पुलिसिंग को भी उतनी ही आधुनिक, तकनीक-आधारित और नागरिक-केंद्रित बनना होगा।

गौतमबुद्ध नगर में पुलिस कमिश्नरेट व्यवस्था किसी एक अपराध या एक घटना की प्रतिक्रिया नहीं थी। यह बदलते भारत, विकसित होते महानगर और नई अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप किया गया एक संस्थागत सुधार था। उत्तर प्रदेश सरकार ने यह समझ लिया था कि जिस जिले में अरबों रुपये का निवेश हो, लाखों लोग प्रतिदिन आवागमन करते हों, अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा बन चुका है और वैश्विक कंपनियाँ काम कर रही हों, वहाँ पारंपरिक पुलिस व्यवस्था पर्याप्त नहीं रह सकती।

आज गौतमबुद्ध नगर का पुलिस कमिश्नरेट केवल कानून-व्यवस्था संभालने वाली संस्था नहीं, बल्कि प्रदेश के सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक क्षेत्र की सुरक्षा, निवेशकों के विश्वास, नागरिकों की सुरक्षा और आधुनिक शहरी प्रशासन की आधारशिला बन चुका है। समय के साथ इसकी सफलता का वास्तविक आकलन इतिहास करेगा, लेकिन इतना निर्विवाद है कि वर्ष 2020 में लिया गया यह निर्णय उत्तर प्रदेश की पुलिस व्यवस्था में सबसे बड़े संस्थागत सुधारों में से एक माना जाएगा। ■

लोकल से ग्लोबल' की उड़ान: क्या उत्तर प्रदेश बनने जा रहा है दुनिया का नया व्यापारिक और विनिर्माण केंद्र?

यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो-2026

ग्रेटर नोएडा में 25 से 29 सितंबर तक आयोजित होने वाला यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो-2026 केवल एक प्रदर्शनी नहीं, बल्कि उत्तर प्रदेश की अर्थव्यवस्था, उद्योग, निर्यात, निवेश और वैश्विक पहचान को नई ऊंचाई देने की व्यापक रणनीति का मंच है।*

कभी उत्तर प्रदेश की पहचान मुख्यतः कृषि, धार्मिक पर्यटन और विशाल जनसंख्या वाले राज्य के रूप में होती थी। आज वही उत्तर प्रदेश निवेश, औद्योगिकीकरण, इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण, रक्षा उत्पादन, लॉजिस्टिक्स, एक्सप्रेसवे नेटवर्क, डेटा सेंटर, सेमीकंडक्टर, एमएसएमई और निर्यात के क्षेत्र में देश के सबसे तेज़ी से उभरते राज्यों में गिना जा रहा है। इसी परिवर्तन की सबसे प्रभावशाली झलक *यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो (UPITS)-2026* में दिखाई देने वाली है। 25 से 29 सितंबर तक ग्रेटर नोएडा के इंडिया एक्सपो सेंटर एंड मार्ट में आयोजित होने वाला यह आयोजन केवल उत्पादों की प्रदर्शनी नहीं, बल्कि "नए उत्तर प्रदेश" की आर्थिक शक्ति का वैश्विक प्रदर्शन होगा। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ स्वयं इसकी तैयारियों की समीक्षा कर चुके हैं और स्पष्ट संदेश दिया है कि उत्तर प्रदेश अब केवल भारत का सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार नहीं, बल्कि दुनिया का भरोसेमंद विनिर्माण और निर्यात साझेदार बनने की दिशा में आगे बढ़ रहा है।

यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो क्यों है इतना महत्वपूर्ण?

दुनिया के अधिकांश विकसित देशों ने अपनी आर्थिक शक्ति का निर्माण वैश्विक व्यापार और निर्यात के माध्यम से किया है। जर्मनी इंजीनियरिंग के कारण, जापान तकनीक के कारण, दक्षिण कोरिया इलेक्ट्रॉनिक्स के कारण, चीन विनिर्माण के कारण विश्व अर्थव्यवस्था का केंद्र बने।

भारत में यदि कोई राज्य इस दिशा में सबसे व्यवस्थित प्रयास कर रहा है तो वह उत्तर प्रदेश दिखाई देता है।

यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो इसी रणनीति का सबसे बड़ा सार्वजनिक मंच बन चुका है।

इस बार का पैमाना पहले से कहीं बड़ा

इस वर्ष आयोजन की थीम है—

"UP for Global Growth: Innovation, Manufacturing & Exports"

यानी लक्ष्य केवल व्यापार नहीं बल्कि नवाचार, आधुनिक विनिर्माण, वैश्विक निर्यात, तकनीकी सहयोग और विदेशी निवेश को एक मंच पर लाना है। आयोजन के अनुमानित आँकड़े इसकी व्यापकता स्वयं बताते हैं। आंकड़ों के अनुसार, 2400 से अधिक प्रदर्शक, 85 देशों से 550 से अधिक अंतरराष्ट्रीय खरीदार, 1.50 लाख से अधिक B2B प्रतिभागी, 4.50 लाख से अधिक सामान्य आगंतुक, 4000 से अधिक एमओयू का लक्ष्य, ₹3200 करोड़ से अधिक प्रस्तावित निवेश समझौते और ₹13,500 करोड़ से अधिक संभावित व्यावसायिक पूछताछ इसकी पुष्टि करते हैं। ये केवल आँकड़े नहीं बल्कि उत्तर प्रदेश की बदलती आर्थिक दिशा के संकेत हैं।

एक मंच पर पूरा उत्तर प्रदेश

यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यहां प्रदेश की लगभग पूरी अर्थव्यवस्था एक ही छत के नीचे दिखाई देती है। इस बार जिन प्रमुख क्षेत्रों का प्रदर्शन होगा उनमें ओडीओपी, ओडीओसी, एमएसएमई, इलेक्ट्रॉनिक्स आईटी, रक्षा एवं एयरोस्पेस, कृषि, खाद्य प्रसंस्करण, पर्यटन, फिल्म उद्योग, स्टार्टअप, लॉजिस्टिक्स, ऑटोमोबाइल, इलेक्ट्रिक वाहन, फार्मा, स्वास्थ्य, हस्तशिल्प, वस्त्र, खादी, चमड़ा, फर्नीचर और अक्षय ऊर्जा सहित 27 से अधिक सेक्टर शामिल हैं। यानी एक ऐसा मंच जहां उत्तर प्रदेश की आर्थिक विविधता का संपूर्ण चित्र दिखाई

देगा।

लोकल' को मिलेगा 'ग्लोबल' बाजार

यूपी सरकार का सबसे बड़ा फोकस *ODOP (One District One Product)* है। मुरादाबाद का पीतल, भदोही का कालीन, सहारनपुर की लकड़ी की नक्काशी, फिरोजाबाद का कांच, वाराणसी की साड़ी, लखनऊ की चिकनकारी, कन्नौज का इत्र

जैसे उत्पाद अब केवल स्थानीय बाजार तक सीमित नहीं रहेंगे। 85 देशों से आने वाले खरीदार सीधे इन उत्पादकों से संपर्क करेंगे। यही इस ट्रेड शो की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जा रही है।

नॉलेज सेशन: व्यापार का भविष्य

यह आयोजन केवल स्टॉल लगाने तक सीमित नहीं रहेगा। इस बार विशेषज्ञ चर्चा होगी। इन विषयों में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, साइबर सुरक्षा, इलेक्ट्रॉनिक्स मैन्युफैक्चरिंग, डिजिटल व्यापार, ई-कॉमर्स, वैश्विक मुक्त व्यापार समझौते (FTA), सड़क सुरक्षा, नई श्रम संहिताएं, बैंकिंग एवं वित्त, खाद्य प्रसंस्करण और ठोस अपशिष्ट प्रबंधन जैसे विषय शामिल हैं। यह संकेत है कि उत्तर प्रदेश उद्योग जगत को भविष्य की तकनीकों और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार करना चाहता है।

सिर्फ उद्योग नहीं, संस्कृति भी होगी पहचान

मुख्यमंत्री का स्पष्ट निर्देश है कि दुनिया जब उत्तर प्रदेश आए तो केवल उद्योग न देखे बल्कि उसकी सांस्कृतिक विरासत भी अनुभव करे। इसीलिए पूरे आयोजन के दौरान कथक, शास्त्रीय संगीत, लोकनृत्य, लोकगायन, भजन और ग़ज़ल जैसी प्रस्तुतियां आयोजित होंगी। यह आर्थिक कूटनीति के साथ सांस्कृतिक कूटनीति का भी उदाहरण होगा।

ग्रेटर नोएडा क्यों बना वैश्विक मंच?

ग्रेटर नोएडा आज उत्तर भारत का सबसे बड़ा प्रदर्शनी एवं औद्योगिक केंद्र बन चुका है। इसके पीछे कई कारण हैं। नोएडा-ग्रेटर नोएडा औद्योगिक क्षेत्र, यमुना एक्सप्रेसवे, जेवर अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा, मल्टीमॉडल कनेक्टिविटी, इलेक्ट्रॉनिक्स मैन्युफैक्चरिंग क्लस्टर, डेटा सेंटर हब, डिफेंस कॉरिडोर से जुड़ाव यही कारण है कि अंतरराष्ट्रीय आयोजनों के लिए ग्रेटर नोएडा सबसे उपयुक्त स्थान बनकर उभरा है।

एक ट्रिलियन डॉलर अर्थव्यवस्था की दिशा में कदम

उत्तर प्रदेश सरकार का लक्ष्य राज्य को *एक ट्रिलियन डॉलर अर्थव्यवस्था* बनाना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति केवल सरकारी योजनाओं से संभव नहीं। इसके लिए आवश्यक हैं। निवेश, उद्योग, निर्यात, रोजगार, कौशल विकास और वैश्विक साझेदारी यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो इन्हीं सभी तत्वों को एक मंच पर जोड़ता है।

रोजगार और कौशल विकास को नई दिशा

बैठक में सरदार वल्लभभाई पटेल रोजगार एवं औद्योगिक क्षेत्र विकास योजना की समीक्षा भी हुई।इसके मुख्य बिंदु ---

- 19 जिलों में लगभग 1320 एकड़ भूमि चिन्हित
- प्रथम चरण में 17 केंद्र विकसित होंगे
- टीसीएस, बीवीजी समूह और हीरानंदानी समूह की रुचि
- प्रतिवर्ष लगभग 10 लाख युवाओं को कौशल प्रशिक्षण
- 80 प्रतिशत प्रशिक्षित युवाओं के प्लेसमेंट का लक्ष्य

यदि यह योजना सफल होती है तो उत्तर प्रदेश देश का सबसे बड़ा स्किल इकोसिस्टम विकसित कर सकता है।

आयोजन की सफलता के लिए कुछ सवालों के उत्तर अनिवार्य हैं ?

यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो निस्संदेह प्रदेश की औद्योगिक छवि को मजबूत करता है, लेकिन इसकी वास्तविक सफलता कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर में निहित होगी—

- क्या एमओयू वास्तविक निवेश में बदलेंगे?
- क्या छोटे उद्यमियों को स्थायी निर्यात बाजार मिलेगा?
- क्या विदेशी खरीदारों के साथ दीर्घकालिक व्यापारिक संबंध बन पाएंगे?
- क्या ओडीओपी उत्पाद वैश्विक गुणवत्ता मानकों पर खरे उतरेंगे?
- क्या निवेश का लाभ छोटे शहरों और ग्रामीण उद्योगों तक पहुंचेगा?

यदि इन प्रश्नों के सकारात्मक उत्तर सामने आते हैं तो यह आयोजन उत्तर प्रदेश की आर्थिक यात्रा में मील का पत्थर सिद्ध होगा।

UPITS-2026 एक नज़र में

बिंदु	विवरण
आयोजन	25–29 सितंबर 2026
स्थान	इंडिया एक्सपो सेंटर एंड मार्ट, ग्रेटर नोएडा
थीम	UP for Global Growth: Innovation, Manufacturing & Exports
प्रदर्शक	2400+
अंतरराष्ट्रीय खरीदार	85 देशों से 550+
B2B प्रतिभागी	1.50 लाख+
B2C आगंतुक	4.50 लाख+
संभावित एमओयू	4000+
प्रस्तावित एमओयू मूल्य	₹3200 करोड़+
संभावित बिजनेस इंक्वायरी	₹13,500 करोड़+

*"उत्तर प्रदेश अब केवल भारत का सबसे बड़ा राज्य नहीं, बल्कि वैश्विक व्यापार, आधुनिक विनिर्माण और निर्यात आधारित अर्थव्यवस्था का उभरता हुआ केंद्र बनने की दिशा में निर्णायक कदम बढ़ा रहा है। यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो-2026 इसी परिवर्तन का सबसे प्रभावशाली मंच है।" यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो-2026 केवल पांच दिनों का व्यापारिक आयोजन नहीं है। यह उत्तर प्रदेश की उस नई आर्थिक सोच का सार्वजनिक घोषणापत्र है, जिसमें स्थानीय उत्पादों को वैश्विक बाजार, युवाओं को कौशल और रोजगार, उद्योगों को निवेश, तथा राज्य को विश्वसनीय विनिर्माण एवं निर्यात केंद्र के रूप में स्थापित करने का स्पष्ट लक्ष्य दिखाई देता है। यदि इस आयोजन से उत्पन्न निवेश, साझेदारियां और निर्यात अवसर ज़मीन पर प्रभावी रूप से साकार होते हैं, तो आने वाले वर्षों में उत्तर प्रदेश केवल भारत की सबसे बड़ी आबादी वाला राज्य नहीं, बल्कि वैश्विक आर्थिक मानचित्र पर एक सशक्त औद्योगिक शक्ति के रूप में भी अपनी पहचान स्थापित कर सकता है। यही संभावना इस कवर स्टोरी को केवल एक आयोजन का विवरण नहीं, बल्कि उत्तर प्रदेश के बदलते आर्थिक भविष्य की कहानी बनाती है। ■

बरसात, नाले और दावों की हकीकत

मानसून का आगमन होते ही सरकारी बैठकों का सिलसिला शुरू हो जाता है। नालों की सफाई, जल निकासी व्यवस्था, जलभराव रोकने की रणनीति और विभागीय समन्वय जैसे विषय हर वर्ष प्रशासनिक एजेंडे का हिस्सा बनते हैं। कागज़ों पर योजनाएं बनती हैं, प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत होती हैं और समयबद्ध कार्य पूर्ण होने के दावे किए जाते हैं। लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि क्या इन बैठकों का परिणाम आम नागरिक की सड़क तक पहुंचता है?

गौतमबुद्ध नगर में मुख्य विकास अधिकारी भालचंद्र त्रिपाठी की अध्यक्षता में आयोजित समीक्षा बैठक में भी वर्षा ऋतु को देखते हुए नालों एवं नालियों की सफाई, जल निकासी व्यवस्था और जलभराव रोकने की तैयारियों की समीक्षा की गई। सिंचाई विभाग ने बताया कि जिले में उसके अधिकार क्षेत्र में 50 नाले हैं, जिनकी कुल लंबाई 320.82 किलोमीटर है। वर्तमान वित्तीय वर्ष में 13 नालों की 146.46 किलोमीटर लंबाई में सफाई का कार्य स्वीकृत हुआ और 30 जून तक शत-प्रतिशत पूरा कर लिया गया। यह जानकारी आश्वस्त करने वाली अवश्य प्रतीत होती है, लेकिन यहीं से कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न भी जन्म लेते हैं।

सबसे पहला प्रश्न यह है कि यदि 50 नाले हैं तो इस वर्ष केवल 13 नालों की सफाई ही क्यों हुई? शेष नालों की स्थिति क्या है? क्या वे पूरी तरह साफ हैं या निर्धारित चक्र के कारण उनकी सफाई टाल दी गई है?

सिंचाई विभाग ने बताया कि छोटे नालों की सफाई दो वर्ष में एक बार, मध्यम क्षमता वाले नालों की तीन वर्ष में एक बार और बड़े नालों की पांच वर्ष में एक बार की जाती है। यह व्यवस्था विभागीय मानकों के अनुरूप हो सकती है, लेकिन बदलती जलवायु, अनियोजित शहरीकरण और लगातार बढ़ते कंक्रीट के विस्तार के बीच यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या पुराने मानक आज भी पर्याप्त हैं?

गौतमबुद्ध नगर अब केवल कृषि प्रधान जिला नहीं रहा। नोएडा, ग्रेटर नोएडा

और तेजी से विकसित हो रहे ग्रामीण-शहरी क्षेत्रों में वर्षा का पानी पहले की तुलना में कहीं अधिक तेजी से सड़कों पर भरता है, क्योंकि प्राकृतिक जल निकासी के मार्ग लगातार कम होते जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में दो, तीन या पांच वर्ष के अंतराल पर सफाई की नीति कितनी व्यावहारिक है, इस पर गंभीर पुनर्विचार की आवश्यकता है। बैठक में गंगा समिति के सदस्यों ने भी यही चिंता व्यक्त की और सभी नालों की प्रतिवर्ष सफाई कराने का सुझाव दिया। यह सुझाव केवल मांग नहीं, बल्कि जमीनी अनुभव पर आधारित प्रतीत होता है। यदि प्रत्येक वर्ष बरसात से पहले नालों की समुचित सफाई हो, तो जलभराव की घटनाओं में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है। बैठक में हवेलिया ड्रेन की सफाई का मुद्दा भी उठा। अधिकारियों ने बताया कि इसका प्रस्ताव ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण को भेज दिया गया है और धनराशि प्राप्त होते ही कार्य शुरू होगा। यह उत्तर प्रशासनिक प्रक्रिया का हिस्सा अवश्य है, लेकिन नागरिकों के लिए सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यही है कि यदि भारी वर्षा धनराशि मिलने से पहले हो गई तो जिम्मेदारी किसकी होगी? जल निकासी व्यवस्था में अक्सर यही समस्या सामने आती है कि विभागों के बीच समन्वय से अधिक फाइलों का आदान-प्रदान दिखाई देता है। एक विभाग प्रस्ताव भेजता है, दूसरा स्वीकृति देता है, तीसरा बजट जारी करता है और चौथा कार्य शुरू करता है। इस पूरी प्रक्रिया में यदि मानसून सक्रिय हो जाए तो सबसे अधिक परेशानी आम नागरिक और किसान को उठानी पड़ती है। मुख्य विकास अधिकारी ने संवेदनशील स्थलों की नियमित निगरानी, विभागीय समन्वय और जलभराव रोकने के निर्देश दिए हैं। यह आवश्यक कदम है, लेकिन अनुभव बताता है कि जलभराव केवल नालों की सफाई का विषय नहीं है। कई स्थानों पर समस्या इसलिए भी बनी रहती है क्योंकि नालों पर अतिक्रमण हो चुका है, जल निकासी के प्राकृतिक मार्ग अवरुद्ध हैं, निर्माण मलबा नालियों में डाला जाता है और प्लास्टिक कचरा पानी के प्रवाह को रोक देता है। यदि इन कारणों पर समान गंभीरता से कार्रवाई नहीं होगी, तो केवल नाला सफाई अभियान स्थायी समाधान नहीं बन सकता। हालांकि गौतमबुद्ध नगर में हर वर्ष मानसून से पहले नालों की सफाई की समीक्षा होती है और हर वर्ष बरसात के दौरान कई क्षेत्रों से जलभराव की शिकायतें भी सामने आती हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि विभाग कार्य नहीं कर रहे, बल्कि यह संकेत है कि वर्तमान व्यवस्था को और अधिक वैज्ञानिक, समन्वित और परिणाम-केंद्रित बनाने की आवश्यकता है। अब समय आ गया है कि केवल "कितने किलोमीटर नाला साफ हुआ" यह उपलब्धि न मानी जाए, बल्कि यह भी सार्वजनिक किया जाए कि कितने जलभराव वाले स्थान समाप्त हुए, कितने नए संवेदनशील बिंदु चिन्हित हुए, कितने अतिक्रमण हटाए गए और बरसात के बाद वास्तविक प्रभाव क्या रहा। सुशासन की पहचान बैठकों से नहीं, बल्कि बरसात के बाद सूखी सड़कों, सुरक्षित खेतों और राहत महसूस करते नागरिकों से होती है। यदि प्रशासन समीक्षा बैठकों के साथ-साथ जमीनी परिणामों का भी सार्वजनिक मूल्यांकन करे, तो न केवल जनता का विश्वास बढ़ेगा बल्कि जलभराव जैसी वर्षों पुरानी समस्या के स्थायी समाधान की दिशा में भी वास्तविक प्रगति दिखाई देगी। ■

गौतमबुद्ध नगर जिले में जन सूचना अधिकार अधिनियम को लेकर सवालिया निशान, राजस्व विभाग कि दयनीय दशा

बढ़ती द्वितीय अपीलें और शिकायतों के बीच जवाबदेही का संकट, राज्य सूचना आयुक्त ने दिखाया आईना

लोकतंत्र की सबसे बड़ी ताकत सत्ता नहीं, बल्कि जनता का यह अधिकार है कि वह सत्ता से प्रश्न पूछ सके। जब प्रश्नों के उत्तर समय पर नहीं मिलते, तब लोकतंत्र कमजोर नहीं दिखता, बल्कि प्रशासनिक व्यवस्था की कमियां उजागर होने लगती हैं।" सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 (आरटीआई) भारतीय लोकतंत्र की उन ऐतिहासिक उपलब्धियों में से एक है जिसने शासन और जनता के बीच पारदर्शिता की एक नई संस्कृति विकसित की। इस कानून का उद्देश्य सरकारी अभिलेखों के द्वार आम नागरिक के लिए खोलना था, ताकि शासन जवाबदेह बने और प्रशासन जनता के प्रति उत्तरदायी रहे। लेकिन जब सूचना प्राप्त करने के लिए नागरिक को जिला कार्यालयों से लेकर राज्य सूचना आयोग तक लंबी लड़ाई लड़नी पड़े, तब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या अधिनियम की मूल भावना वास्तव में धरातल पर लागू हो रही है? गौतमबुद्ध नगर में उत्तर प्रदेश राज्य सूचना आयोग के राज्य सूचना आयुक्त मोहम्मद नदीम की समीक्षा बैठक ने इसी प्रश्न को केंद्र में ला खड़ा किया है। बैठक के दौरान सामने आए तथ्य केवल आंकड़े नहीं हैं, बल्कि वे प्रशासनिक संवेदनशीलता, जवाबदेही और कार्य संस्कृति पर गंभीर प्रश्नचिह्न भी हैं।

220 लंबित मामले—सिर्फ संख्या नहीं, व्यवस्था की चेतावनी

समीक्षा बैठक में यह तथ्य सामने आया कि गौतमबुद्ध नगर से संबंधित 220 द्वितीय अपील एवं शिकायतें राज्य सूचना आयोग में लंबित हैं। इनमें से 57 मामले अकेले राजस्व विभाग से जुड़े हैं। अर्थात जिले के कुल लंबित मामलों का एक बड़ा हिस्सा केवल एक विभाग से संबंधित है। यह स्थिति इसलिए भी चिंताजनक है क्योंकि राजस्व विभाग सीधे आम नागरिकों से जुड़ा विभाग है। भूमि, खतौनी, नामांतरण, सीमांकन, विरासत, सरकारी भूमि, अधिग्रहण और राजस्व अभिलेखों से संबंधित अधिकांश सूचनाएं यहीं से प्राप्त होती हैं। यदि यही विभाग सूचना देने में सबसे अधिक उदासीन दिखाई दे, तो आम नागरिक की परेशानी का अनुमान सहज लगाया जा सकता है।

70 प्रतिशत मामले जिला स्तर पर ही सुलझ सकते थे

राज्य सूचना आयुक्त मोहम्मद नदीम ने समीक्षा के दौरान जो तथ्य साझा किए, वे पूरे प्रशासनिक तंत्र के लिए आत्ममंथन का विषय हैं। उन्होंने बताया कि उनके कार्यकाल में राज्य सूचना आयोग के समक्ष लगभग 60 हजार मामले आए। इनमें से आधे से अधिक का निस्तारण किया जा चुका है, जबकि लगभग 23 हजार मामले अभी भी लंबित हैं। इसके अतिरिक्त आयोग ने पूर्व से लंबित लगभग 25 हजार मामलों का भी निस्तारण किया है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह रहा कि आयोग की समीक्षा में पाया गया कि लगभग 70 प्रतिशत मामलों में आयोग के हस्तक्षेप के बाद ही आवेदकों को सूचना मिली या वे संतुष्ट हुए। यह आंकड़ा स्वयं बताता है कि यदि जिला स्तर पर जन सूचना अधिकारी और प्रथम अपीलीय अधिकारी अपनी जिम्मेदारी का प्रभावी निर्वहन करते, तो हजारों नागरिकों को राज्य सूचना आयोग की शरण में जाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। इससे केवल नागरिकों का समय और धन ही नहीं बचता, बल्कि सरकारी धन, प्रशासनिक ऊर्जा और आयोग की कार्यक्षमता भी अधिक प्रभावी ढंग से उपयोग हो सकती थी।

राजस्व विभाग की कार्यशैली पर गंभीर टिप्पणी

बैठक में राज्य सूचना आयुक्त ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि गौतमबुद्ध नगर के राजस्व विभाग में सूचना का अधिकार अधिनियम के प्रति अपेक्षित गंभीरता और

संवेदनशीलता दिखाई नहीं देती। यह टिप्पणी किसी व्यक्तिगत आलोचना से अधिक प्रशासनिक व्यवस्था पर की गई संस्थागत टिप्पणी है। स्थिति की गंभीरता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि समीक्षा बैठक में जिले की तीनों तहसीलों को आमंत्रित किया गया था, लेकिन सबसे बड़ी तहसील दादरी का कोई प्रतिनिधि उपस्थित नहीं हुआ। राज्य सूचना आयुक्त ने इसे अत्यंत गंभीर लापरवाही बताते हुए कहा कि इस संबंध में मुख्य सचिव को अवगत कराया जाएगा तथा जिम्मेदार अधिकारियों के विरुद्ध कार्रवाई की संस्तुति की जाएगी।

जब अधिकारी ही कानून से अपरिचित हों

बैठक का सबसे चिंताजनक पक्ष वह रहा जब अधिकारियों से पूछा गया कि द्वितीय अपील और शिकायत में क्या अंतर है। बताया गया कि उपस्थित अधिकांश अधिकारी इसका संतोषजनक उत्तर नहीं दे सके। यह केवल एक प्रश्न का उत्तर न दे पाने की बात नहीं है, बल्कि यह दर्शाता है कि जिन अधिकारियों पर आरटीआई अधिनियम लागू करने की जिम्मेदारी है, वे स्वयं उसके मूल प्रावधानों की पर्याप्त जानकारी नहीं रखते। ऐसी स्थिति में सूचना आवेदन का समयबद्ध और विधिसम्मत निस्तारण कैसे होगा, यह प्रश्न स्वाभाविक है।

प्रथम अपील अधिकारी की भूमिका क्यों कमजोर पड़ रही हे ?

बैठक के दौरान उपलब्ध अभिलेखों के आधार पर यह भी जानकारी सामने आई कि राजस्व विभाग से जुड़े मामलों में अब तक 74 लोक सूचना अधिकारियों पर दंड लगाया जा चुका है। यह संख्या केवल अनुशासनात्मक कार्रवाई का रिकॉर्ड नहीं, बल्कि यह बताती है कि सूचना का अधिकार अधिनियम के अनुपालन में लंबे समय से गंभीर कमियां बनी हुई हैं। राज्य सूचना आयुक्त ने स्पष्ट किया कि चाहे अधिकारी किसी अन्य जिले में स्थानांतरित हो चुके हों, दंड की वसूली से उन्हें छूट नहीं मिलेगी। जहां वसूली शेष है, वहां नियमानुसार कार्रवाई की जाएगी। प्रथम अपीलीय अधिकारी की भूमिका क्यों कमजोर पड़ रही है? आरटीआई अधिनियम में प्रथम अपील केवल औपचारिक प्रक्रिया नहीं है।

इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि यदि आवेदक जन सूचना अधिकारी के उत्तर से संतुष्ट नहीं है, तो उसे जिला स्तर पर ही न्याय मिल जाए। लेकिन समीक्षा में यह पाया गया कि अनेक मामलों में प्रथम अपीलीय अधिकारी या तो बिना सुनवाई के आदेश पारित कर देते हैं अथवा केवल जन सूचना अधिकारी के उत्तर को ही स्वीकार कर लेते हैं। राज्य सूचना आयुक्त ने निर्देश दिया कि प्रथम अपीलीय अधिकारी दोनों पक्षों को सुनें, तथ्यों की निष्पक्ष समीक्षा करें और यथासंभव जिला स्तर पर ही विवाद का समाधान करें। यदि यह व्यवस्था प्रभावी हो जाए, तो राज्य सूचना आयोग तक पहुंचने वाले मामलों में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है।

पारदर्शिता केवल सूचना देने से नहीं, व्यवस्था बदलने से आएगी

समीक्षा बैठक में कई महत्वपूर्ण निर्देश दिए गए—

प्रत्येक कार्यालय में जन सूचना अधिकारी एवं प्रथम अपीलीय अधिकारी का नाम, मोबाइल नंबर और ई-मेल सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित किया जाए। विभागीय वेबसाइटों को नियमित रूप से अपडेट रखा जाए। रिकॉर्ड प्रबंधन वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित बनाया जाए। आरटीआई आवेदन यदि किसी अन्य विभाग से संबंधित हो तो पांच दिनों के भीतर संबंधित विभाग को स्थानांतरित किया जाए। सभी अधिकारी सूचना का अधिकार अधिनियम का गहन अध्ययन करें और उसकी मूल भावना को समझें। ये निर्देश केवल प्रक्रियात्मक सुधार नहीं, बल्कि प्रशासनिक सोच में बदलाव का भी प्रयास हैं। गौतमबुद्ध नगर देश के सबसे तेजी से विकसित हो रहे जिलों में शामिल है। यहां औद्योगिक निवेश, भूमि अधिग्रहण, शहरी विकास, एक्सप्रेसवे, आवासीय परियोजनाएं और राजस्व से जुड़े हजारों निर्णय प्रतिवर्ष लिए जाते हैं। ऐसे जिले में सूचना का अधिकार अधिनियम केवल कानूनी औपचारिकता नहीं, बल्कि सुशासन की आधारशिला है। राज्य सूचना आयुक्त की समीक्षा बैठक ने स्पष्ट संकेत दिया है कि समस्या केवल लंबित फाइलों की नहीं, बल्कि कार्य संस्कृति, प्रशिक्षण, जवाबदेही और प्रशासनिक संवेदनशीलता की भी है। यदि जिला स्तर पर जन सूचना अधिकारी समयबद्ध सूचना दें, प्रथम अपीलीय अधिकारी निष्पक्ष सुनवाई करें, राजस्व विभाग अपनी कार्यप्रणाली में सुधार लाए और विभागीय वेबसाइटों पर सूचनाएं स्वतः उपलब्ध कराई जाएं, तो न केवल राज्य सूचना आयोग का बोझ कम होगा, बल्कि जनता और प्रशासन के बीच विश्वास भी मजबूत होगा।

सूचना का अधिकार अधिनियम किसी नागरिक की सुविधा भर नहीं, बल्कि लोकतंत्र की आत्मा है। यदि सूचना समय पर नहीं मिलती, तो केवल एक आवेदन लंबित नहीं होता, बल्कि शासन की पारदर्शिता पर भी प्रश्नचिह्न लग जाता है। गौतमबुद्ध नगर के लिए यह समीक्षा बैठक एक चेतावनी भी है और एक अवसर भी—चेतावनी इसलिए कि व्यवस्था की कमियां उजागर हो चुकी हैं, और अवसर इसलिए कि यदि अब भी सुधार की दिशा में गंभीर कदम उठाए जाएं, तो जनपद पारदर्शी, जवाबदेह और नागरिक-केंद्रित प्रशासन का एक सशक्त उदाहरण बन सकता है। ■

सोने का पिंजरा

मनुष्य का भाग्य केवल उसकी जन्मभूमि नहीं लिखती; उसके संस्कार, उसके निर्णय और समय के साथ उसका संबंध भी उसे गढ़ते हैं।" उत्तर भारत के मैदानी अंचल में बसा रौनकपुर छोटा-सा गाँव था, पर उसके लोगों का हृदय विशाल था। मिट्टी के घर थे, पर रिश्ते पत्थर से भी अधिक मजबूत। किसी के घर दुःख आता तो पूरा गाँव उसके साथ खड़ा हो जाता। गाँव का सरकारी विद्यालय केवल पढ़ाई का स्थान नहीं, आने वाले कल की पाठशाला था। इसी विद्यालय में दो मित्र पढ़ते थे—राम और श्याम। एक ही बेंच, एक ही सपने और ऐसी मित्रता कि लोग उन्हें "दाँत-काटी रोटी" कहा करते थे।

राम किसान हरनाम सिंह का बेटा था। उसने बचपन से पिता के पसीने और माँ के त्याग को देखा था। वह समझ चुका था कि जीवन का पहला पाठ पुस्तकों से पहले श्रम सिखाता है। दूसरी ओर श्याम के पिता रघुवीर प्रसाद सरकारी कर्मचारी थे। उनका विश्वास था कि शिक्षा ही बेटे को अभावों से बहुत दूर ले जाएगी।

समय बदला। माध्यमिक शिक्षा पूरी होते ही रघुवीर प्रसाद का तबादला महानगर हो गया। विदा के समय राम ने बस इतना कहा—

"जहाँ भी रहना, अपने गाँव को मत भूलना।"

श्याम मुस्कुराया—"गाँव भी कहीं भुलाया जाता है?"

पर जीवन अक्सर वही भुला देता है, जिसे मनुष्य कभी भूलना नहीं चाहता।

महानगर ने श्याम का स्वागत ऊँची इमारतों, अंग्रेज़ी माध्यम विद्यालय, नई दुनिया और नई महत्वाकांक्षाओं से किया। धीरे-धीरे गाँव की मिट्टी उसके जूतों से ही नहीं, उसकी स्मृतियों से भी झड़ने लगी। उधर राम ने गाँव में ही पढ़ाई जारी रखी। सुबह खेतों में पिता का हाथ बँटाता, दिन में कॉलेज जाता और रात को लालटेन की रोशनी में पढ़ता। अभाव थे, पर शिकायत नहीं। गाँव में किसी पर संकट आता तो सबसे पहले वही पहुँचता। धीरे-धीरे लोग उसे उसके नाम से कम, उसके स्वभाव से अधिक पहचानने लगे।

वर्षों बाद दोनों की राहें पूरी तरह बदल चुकी थीं।

श्याम ने प्रतिष्ठित संस्थान से इंजीनियरिंग कर बहुराष्ट्रीय कंपनी में ऊँचा पद पा लिया। महँगी कार, आलीशान घर, विदेश यात्राएँ और कॉर्पोरेट जीवन उसकी पहचान बन गए। उसे लगने लगा कि सफलता का अर्थ अधिक से अधिक सुविधाएँ जुटा लेना है।

उधर राम ने खेती, परिवार और समाज-सेवा को ही अपना जीवन बना लिया। उसके पास साधन कम थे, पर संतोष अधिक था।

समय ने दोनों के बीच दूरी केवल किलोमीटरों में नहीं, जीवन-दृष्टि में भी पैदा कर दी।

एक दिन सोशल मीडिया पर दोनों का फिर संपर्क हुआ। शुरुआत बचपन की यादों से हुई, लेकिन जल्द ही बातचीत बदल गई। राम गाँव, खेत, चौपाल और

लोगों की चर्चा करता, जबकि श्याम की बातें बोनस, पदोन्नति, विदेश यात्राओं और नई कारों के इर्द-गिर्द घूमतीं।

फिर भी राम ने आग्रह नहीं छोड़ा।

"एक बार गाँव आ जाओ... बरगद अब भी तुम्हें याद करता है।"

हर बार उत्तर मिलता—"बहुत व्यस्त हूँ।"

फिर एक दिन राम ने केवल एक पंक्ति लिखी—

«"कुछ रिश्ते समय माँगते हैं, कारण नहीं।"»

यह वाक्य श्याम के भीतर उतर गया। संयोग से उसे कुछ दिनों की छुट्टी मिली और वर्षों बाद वह रौनकपुर लौट आया। गाँव की सीमा पर राम प्रतीक्षा कर रहा था। दोनों गले मिले। राम के आलिंगन में वर्षों का अपनापन था, पर श्याम के महँगे कपड़ों पर लगी मिट्टी देखकर उसके चेहरे पर क्षणभर की झिझक भी उभर आई। राम ने वह भाव पढ़ लिया, फिर भी मुस्कुराकर बोला—

"चलो, घर चलते हैं।"

राम का घर वैसा ही था—मिट्टी का आँगन, तुलसी का चौरा और आत्मीयता से भरा वातावरण। उसकी माँ ने गुड़, दही और गरम रोटियों से स्वागत किया। इतने स्नेह के बीच भी रात भर श्याम सो नहीं सका। उसे पहली बार लगा कि सुविधा और संतोष एक ही चीज़ नहीं होते। अगली सुबह दोनों गाँव की पगडंडी पर निकल पड़े।

श्याम बोला, "राम, तुमने कभी शहर में बसने का नहीं सोचा? वहाँ सब कुछ है। यहाँ रखा ही क्या है?" राम मुस्कुराया। "आदमी वहीं रहे जहाँ वह सबसे अधिक काम आ सके।"

तभी सामने से आवाज़ आई—

"अरे, मेरे दोनों शिष्य!"

वे थे उनके पुराने गुरु—पंडित मदनलाल। कुछ देर पुरानी बातें होती रहीं। फिर श्याम ने गर्व से महानगर की चमक, ऊँची नौकरी और आधुनिक जीवन का वर्णन किया। पंडित जी शांत भाव से सुनते रहे। अचानक उन्होंने कमरे के कोने में रखा पुराना बाँस का पिंजरा सामने रख दिया। "कल तक इसमें एक मैना थी। उड़ गई। सोचता हूँ, अबकी बार चाँदी या सोने का पिंजरा बनवा दूँ।"

श्याम हँस पड़ा।

"गुरुजी, पक्षी पिंजरे की कीमत नहीं समझता। उसे तो खुला आकाश चाहिए।" पंडित जी ने उसकी आँखों में देखते हुए पूछा— «"यदि पक्षी सोने का पिंजरा स्वीकार नहीं करता क्योंकि उसे स्वतंत्रता प्रिय है, तो मनुष्य क्यों उन पिंजरों में स्वयं को बंद कर लेता है जिन्हें वह अपनी सबसे बड़ी उपलब्धि समझता है?"

श्याम मौन रह गया। पंडित जी ने धीरे से कहा—

«"पिंजरे केवल लोहे के नहीं होते। वे महँगी कारों, ऊँची कुर्सियों, बैंक बैलेंस, प्रतिष्ठा और अहंकार के भी होते हैं। सुविधा बुरी नहीं है, पर जिस दिन सुविधा तुम्हारी स्वतंत्रता और रिश्तों पर अधिकार जमा ले,

उसी दिन वह सोने का पिंजरा बन जाती है।"

बाहर पेड़ पर बैठी एक चिड़िया चहकी और खुले आकाश में उड़ गई। श्याम की दृष्टि उसी पर ठहर गई।

रौनकपुर से लौटते समय वही सड़क थी, वही खेत थे, वही किसान; पर अब उसकी दृष्टि बदल चुकी थी।

कुछ दिनों बाद वह तेज़ बुखार से घर पर अकेला पड़ा था। उसने कई मित्रों को फोन किया। हर ओर से एक ही उत्तर मिला—

"अभी व्यस्त हूँ... बाद में मिलते हैं।"

मोबाइल पर सैकड़ों शुभकामनाएँ थीं, पर हाल पूछने वाला कोई नहीं।

उसी रात माँ उसके पास आईं। सब सुनने के बाद उन्होंने केवल इतना कहा—

«"धन कमाना गलत नहीं, लेकिन धन जेब में अच्छा लगता है, मन पर नहीं।"»

श्याम की आँखें भर आईं।

"माँ, अब समझ गया हूँ। पिंजरे में बंद पक्षी मैं ही था। मैंने सफलता को जीवन समझ लिया था, जबकि सोने का पिंजरा कभी आकाश नहीं बन सकता।"

उस दिन के बाद उसने नौकरी नहीं छोड़ी, बल्कि जीवन जीने का तरीका बदल दिया। परिवार को समय दिया, पुराने रिश्ते सँवारे, गाँव के विद्यालय में पुस्तकालय बनवाया, निर्धन विद्यार्थियों की पढ़ाई का दायित्व लिया और राम के साथ मिलकर गाँव में जल-संचयन तथा आधुनिक खेती की पहल शुरू की।

अब उसे समझ आ चुका था कि देने का सुख, पाने के सुख से कहीं बड़ा होता है। एक वर्ष बाद रौनकपुर के विद्यालय के वार्षिकोत्सव में वह मुख्य अतिथि था। बरामदे में वही पुराना पिंजरा टँगा था—दरवाज़ा खुला और भीतर कोई पक्षी नहीं।

श्याम ने मुस्कुराकर पूछा—

"गुरुजी, इसे आज तक सँभालकर रखा है?"

पंडित जी बोले—

"यह पिंजरा पक्षियों को कैद करने के लिए नहीं, मनुष्यों को जगाने के लिए है।"

मंच पर खड़े होकर श्याम ने बच्चों से कहा—

«"जीवन में खूब पढ़ो, आगे बढ़ो, दुनिया देखो, धन कमाओ; लेकिन इतनी भी दौड़ मत लगाना कि तुम्हारे पास अपने माता-पिता, अपने मित्रों और अपनी मिट्टी के लिए समय ही न बचे। जिस दिन उपलब्धियाँ तुम्हारी स्वतंत्रता और संवेदनाएँ छीन लेंगी, उसी दिन वे सोने का पिंजरा बन जाएँगी।"»

पूरा विद्यालय तालियों से गूँज उठा। राम की आँखों में गर्व था, पंडित मदनलाल के चेहरे पर संतोष और श्याम के मन में वर्षों बाद सच्ची शांति।

साँझ ढल रही थी। दोनों मित्र खेत की मेड़ पर साथ चल रहे थे। आकाश में पक्षियों का झुंड अपने घोंसलों की ओर लौट रहा था।

श्याम ने उन्हें देर तक देखा, फिर धीमे से कहा—

«"अब समझ गया हूँ... उड़ना पंखों से नहीं, मन से होता है।"»

सामने खुला आकाश था, पीछे डूबता सूरज और बीच में दो मित्र—जो समय से बिछड़े थे, पर जीवन के सबसे बड़े सत्य ने उन्हें फिर एक कर दिया था।

क्योंकि सोने का पिंजरा चाहे जितना चमकदार क्यों न हो, वह कभी खुले आकाश का स्थान नहीं ले सकता। ■

"शिक्षा केवल डिग्री नहीं, राष्ट्र निर्माण का सबसे बड़ा माध्यम है"

साक्षात्कार : व्यक्ति विशेष

— श्रीचंद शर्मा, शिक्षक विधायक (एमएलसी), मेरठ- सहारनपुर मंडल

प्रश्न : आपके पहले कार्यकाल की प्रमुख प्राथमिकताएँ क्या थीं? क्या वे पूरी हो चुकी हैं और अगले कार्यकाल का एजेंडा क्या होगा?

उत्तर : जब भारतीय जनता पार्टी ने पहली बार शिक्षक एमएलसी का चुनाव लड़ने का निर्णय लिया और मुझे दायित्व दिया, तभी से मेरी प्राथमिकता स्पष्ट रही—शिक्षार्थी, शिक्षक और शिक्षा। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के नेतृत्व में नई शिक्षा नीति लागू हुई, कोरोना काल में शिक्षा व्यवस्था को संभाला गया तथा शिक्षकों के हित में अनेक निर्णय लिए गए।

हमारे प्रयासों से वित्तविहीन शिक्षकों, एडेड और प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों सहित उच्च शिक्षा संस्थानों के शिक्षकों के लिए कैशलेस चिकित्सा सुविधा का मार्ग प्रशस्त हुआ। शिक्षणेत्तर कर्मचारियों, शिक्षामित्रों और अनुदेशकों को भी इसका लाभ मिले, इसके लिए लगातार प्रयास किए गए। मानदेय संबंधी समस्याओं के समाधान की दिशा में भी कार्य हुआ। साथ ही पाठ्यक्रम में भारत की गौरवशाली ज्ञान परंपरा और सांस्कृतिक विरासत को स्थान दिलाने का प्रयास किया गया।

प्रश्न : अगले कार्यकाल में आपकी प्रमुख प्राथमिकताएँ क्या होंगी?

उत्तर : हमारा प्रयास रहेगा कि सीबीएसई और आईसीएसई विद्यालयों के शिक्षकों को भी कैशलेस चिकित्सा सुविधा मिले। इस संबंध में मुख्यमंत्री को प्रस्ताव दिया जा चुका है।

इसके अतिरिक्त सीमित क्षेत्र में संचालित होने वाली स्कूल बसों को परमिट व्यवस्था से मुक्त कराने, विद्यालयों में किसी घटना की स्थिति में बिना निष्पक्ष जांच के शिक्षक, प्रधानाचार्य या प्रबंधक के विरुद्ध मुकदमा दर्ज न होने, वित्तविहीन शिक्षकों के अनुभव को शिक्षक भर्ती में मान्यता दिलाने तथा गुमनाम शिकायतों के आधार पर शिक्षकों के अनावश्यक उत्पीड़न को रोकने के लिए सरकार के समक्ष ठोस पहल की गई है।

प्रश्न : उत्तर प्रदेश की शिक्षा व्यवस्था के सामने सबसे बड़ी चुनौती क्या है?

उत्तर : सबसे बड़ी आवश्यकता विद्यालयों के आधारभूत ढांचे (इन्फ्रास्ट्रक्चर) को और मजबूत करने की है। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने कायाकल्प योजना के माध्यम से प्राथमिक विद्यालयों में शौचालय, फर्नीचर, कंप्यूटर, प्रयोगशालाएं और अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराईं। अब माध्यमिक विद्यालयों के पुराने और जर्जर भवनों के पुनर्निर्माण के लिए अलंकार योजना के माध्यम से बड़ा बजट उपलब्ध कराया गया है।

प्रश्न : नई शिक्षा नीति को आप किस दृष्टि से देखते हैं?

उत्तर : नई शिक्षा नीति शिक्षा को रोजगार, कौशल और तकनीक से जोड़ती है। इसका उद्देश्य केवल डिग्री देना नहीं, बल्कि विद्यार्थियों को आत्मनिर्भर बनाना है। विद्यालयों में अटल प्रयोगशालाएं, डिजिटल संसाधन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और कौशल आधारित शिक्षा पर तेजी से काम हो रहा है।

प्रश्न : क्या इसके क्रियान्वयन में कोई चुनौती भी है?

उत्तर : सबसे बड़ी चुनौती पर्याप्त आधारभूत संरचना और प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता सुनिश्चित करना है। सरकार इस दिशा में तेजी से कार्य कर रही है।

प्रश्न : सरकारी विद्यालयों की गुणवत्ता सुधारने के लिए क्या प्रयास हुए हैं?

उत्तर : शिक्षक भर्ती प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी बनाया गया है। चयन आयोग के माध्यम से योग्य शिक्षकों की नियुक्ति हो रही है। सरकार अब तक 1.65 लाख से अधिक प्राथमिक शिक्षक, 35 हजार से अधिक माध्यमिक शिक्षक, 5 हजार से

अधिक राजकीय शिक्षक तथा 500 से अधिक प्रधानाचार्यों की नियुक्ति कर चुकी है। एडेड कॉलेजों के शिक्षकों को पदोन्नति के साथ प्रोफेसर लिखने और पीएचडी गाइड बनने का अधिकार भी दिया गया है।

प्रश्न : शिक्षकों पर गैर-शैक्षणिक कार्यों का बढ़ता बोझ क्या चिंता का विषय है?

उत्तर : शिक्षक हमेशा सबसे विश्वसनीय माने जाते हैं, इसलिए चुनाव सहित कई महत्वपूर्ण जिम्मेदारियां उन्हें दी जाती हैं। फिर भी हमारा प्रयास रहेगा कि शिक्षकों पर गैर-शैक्षणिक कार्यों का बोझ न्यूनतम हो, ताकि वे शिक्षा पर अधिक ध्यान दे सकें।

प्रश्न : शिक्षामित्रों, अनुदेशकों और संविदा कर्मियों के लिए क्या प्रयास हुए?

उत्तर : इन वर्गों के लिए न्यूनतम सम्मानजनक मानदेय सुनिश्चित करने की दिशा में सरकार प्रयासरत है। उनके भविष्य को सुरक्षित करने के लिए आयोग का गठन किया गया है और उन्हें भी कैशलेस चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई गई है।

प्रश्न : स्थानांतरण और सेवा संबंधी समस्याओं पर क्या सुधार हुए?

उत्तर : स्थानांतरण नीति को पहले की तुलना में अधिक सरल और पारदर्शी बनाया गया है। अब पूरी प्रक्रिया ऑनलाइन है तथा अनावश्यक औपचारिकताओं को कम किया गया है, जिससे पात्र शिक्षकों का स्थानांतरण अधिक सहज हो सके।

प्रश्न : नई पेंशन योजना को लेकर आपका क्या दृष्टिकोण है?

उत्तर : वर्ष 2017 से पहले नई पेंशन योजना के क्रियान्वयन में गंभीर कमियां रहीं। भाजपा सरकार बनने के बाद शिक्षकों के खातों में लंबित अंशदान जमा कराया गया और सरकारी योगदान 10 प्रतिशत से बढ़ाकर 14 प्रतिशत किया गया। हमारा प्रयास है कि नई पेंशन व्यवस्था और अधिक मजबूत तथा लाभकारी बने।

प्रश्न : तकनीकी शिक्षा और डिजिटल दक्षता को लेकर सरकार क्या कर रही है?

उत्तर : आईटीआई और प्रयोगशालाओं को आधुनिक बनाया जा रहा है। उद्योगों और तकनीकी संस्थानों के सहयोग से विद्यालयों में तकनीकी एवं कौशल आधारित शिक्षा को बढ़ावा दिया जा रहा है ताकि विद्यार्थी पढ़ाई के साथ रोजगारोन्मुख दक्षता भी प्राप्त कर सकें।

प्रश्न : ग्रामीण और शहरी विद्यालयों के बीच की दूरी कैसे कम होगी?

उत्तर : सड़क, बिजली, इंटरनेट, पेयजल और अन्य बुनियादी सुविधाओं के विस्तार से गांवों की तस्वीर बदली है। मजबूत आधारभूत ढांचे का सीधा लाभ शिक्षा को भी मिल रहा है। सरकार का लक्ष्य है कि गांवों के विद्यार्थियों को भी वही अवसर मिलें जो शहरों में उपलब्ध हैं।

प्रश्न : नकल और पेपर लीक पर आपका दृष्टिकोण?

उत्तर : नकल और पेपर लीक मेहनती विद्यार्थियों के साथ अन्याय है। भाजपा सरकार की नीति इस विषय पर जीरो टॉलरेंस की रही है। उत्तर प्रदेश में पहले भी नकल विरोधी कानून लागू किया गया और अब पेपर लीक रोकने के लिए भी कठोर कानूनी व्यवस्था बनाई गई है। हमारा विश्वास केवल योग्यता आधारित चयन में है।

प्रश्न : परीक्षा के दौरान विद्यार्थियों के मानसिक दबाव को कैसे कम किया जाए?

उत्तर : प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 'परीक्षा पर चर्चा' जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से विद्यार्थियों का मनोबल बढ़ाया है। विद्यालयों में भी शिक्षकों को विद्यार्थियों की नियमित काउंसलिंग करने के निर्देश दिए गए हैं।

प्रश्न : रोजगारपरक शिक्षा को लेकर क्या पहल हुई है?

उत्तर : नई शिक्षा नीति के अंतर्गत कक्षा छह से ही कौशल विकास और व्यावसायिक शिक्षा का समावेश किया गया है, ताकि विद्यार्थी पढ़ाई के साथ किसी न किसी कौशल में दक्ष बन सकें।

प्रश्न : शिक्षा के राजनीतिकरण के आरोपों पर आपका क्या कहना है?

उत्तर : हर सरकार अपनी प्राथमिकताओं के अनुसार परिवर्तन करती है। हमारा मानना है कि विद्यार्थियों को भारत की गौरवशाली ज्ञान परंपरा, संस्कृति और विरासत से परिचित कराना आवश्यक है। यदि भारत अपनी उपलब्धियों और ज्ञान परंपरा का सम्मान करेगा, तभी नई पीढ़ी आत्मगौरव के साथ आगे बढ़ सकेगी।

प्रश्न : सरकारी और निजी विद्यालयों के बीच की खाई कैसे कम होगी?

उत्तर : सरकार का उद्देश्य किसी विद्यालय को बंद करना नहीं, बल्कि संसाधनों का बेहतर उपयोग करना है। जहां छात्र संख्या बहुत कम है, वहां विद्यालयों का समायोजन किया गया है ताकि विद्यार्थियों को पर्याप्त शिक्षक मिल सकें। खाली भवनों का उपयोग बालवाड़ी जैसे शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए किया जा रहा है।

प्रश्न : आपने शिक्षक राजनीति ही क्यों चुनी?

उत्तर : मेरा जीवन शिक्षा और समाज सेवा से जुड़ा रहा है। मेरा विश्वास है कि राष्ट्र निर्माण में शिक्षक की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। यदि मैं शिक्षकों और विद्यार्थियों को भारतीय ज्ञान परंपरा से जोड़ने में सफल हुआ, तो अपने जीवन को सार्थक मानूंगा।

प्रश्न : आपके विरोधियों का आरोप है कि आपका झुकाव निजी विद्यालयों के शिक्षकों की ओर अधिक रहा है।

उत्तर : यह धारणा सही नहीं है। मेरे लिए सरकारी, एडेड, वित्तविहीन, सीबीएसई, आईसीएसई, शिक्षामित्र, अनुदेशक—सभी शिक्षक समान हैं। मैंने हर वर्ग की समस्याओं को उठाया है और उनके समाधान का प्रयास किया है। शिक्षक चाहे किसी भी व्यवस्था का हो, उसका सम्मान और हित हमारी प्राथमिकता है।

प्रश्न : यदि शिक्षक आपके पहले कार्यकाल का मूल्यांकन करें तो किस आधार पर करें?

उत्तर : मेरा आग्रह केवल इतना है कि शिक्षक यह देखें कि क्या मैं उनके सुख-दुख में उनके साथ खड़ा रहा, क्या उनकी समस्याओं को सरकार तक पहुंचाया और समाधान का प्रयास किया। यदि उन्हें लगे कि मैंने एक प्रतिनिधि नहीं बल्कि एक सेवक की भूमिका निभाई है, तो वही मेरे कार्यकाल का सबसे बड़ा मूल्यांकन होगा।

तकनीक का तिलिस्म और लोकतंत्र का बंद दरवाज़ा

विज्ञान ने तकनीक इसलिए नहीं दी थी कि वह मनुष्य को मनुष्य से दूर कर दे। शासन को वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग इसलिए नहीं मिली थी कि अधिकारी नागरिक से अधिक स्क्रीन के प्रति उत्तरदायी हो जाए। तकनीक का जन्म व्यवस्था को गति देने के लिए हुआ था, उसे जटिल बनाने के लिए नहीं। किंतु विडंबना देखिए, आज अनेक सरकारी कार्यालयों में ऐसा प्रतीत होने लगा है कि अधिकारी का सबसे बड़ा दायित्व जनता नहीं, बल्कि स्क्रीन पर चल रही अगली वीडियो कॉन्फ्रेंस है।

प्रशासन की आत्मा संवाद है, लेकिन संवाद अब मनुष्य से नहीं, मॉनिटर से होने लगा है। कार्यालयों के दरवाज़े बंद हैं, भीतर कैमरे खुले हैं; बाहर नागरिक खड़े हैं, भीतर प्रस्तुतियाँ चल रही हैं। लोकतंत्र की सबसे जीवंत संस्था—जनसुनवाई—कई बार एक डिजिटल बैठक की बलि चढ़ जाती है। ऐसा लगता है मानो तकनीक ने सुविधा के नाम पर संवेदना का स्थान ले लिया हो।

यह स्वीकार करना होगा कि वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग आधुनिक प्रशासन की आवश्यकता है। इससे समय बचता है, यात्रा का खर्च घटता है और त्वरित समीक्षा संभव होती है। किंतु हर औषधि की एक निर्धारित मात्रा होती है। वही औषधि यदि अति में दी जाए तो उपचार नहीं, दुष्प्रभाव उत्पन्न करती है। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के साथ भी आज यही संकट दिखाई देता है।

आज अनेक अधिकारी स्वयं इस स्थिति के बंदी हैं। वे नागरिक से क्षमा माँगते हैं—"बस पाँच मिनट... वीसी समाप्त होते ही आपकी बात सुनता हूँ।" लेकिन वे पाँच मिनट कई बार पाँच घंटे में बदल जाते हैं। सुबह घर से यह विश्वास लेकर निकला फरियादी कि आज उसकी समस्या सुनी जाएगी, शाम को उसी विश्वास

का बोझ लेकर लौट जाता है। उसके लिए सबसे बड़ी पीड़ा केवल प्रतीक्षा नहीं, बल्कि यह एहसास है कि उसकी समस्या किसी डिजिटल एजेंडे से भी कम महत्वपूर्ण समझी गई।

लोकतंत्र में अधिकारी की पहली जिम्मेदारी जनता है। उच्चाधिकारियों की समीक्षा, योजनाओं की प्रगति और प्रशासनिक बैठकें आवश्यक हैं, परंतु वे कभी भी नागरिक और प्रशासन के बीच खड़े नहीं हो सकते। यदि तकनीक जनता तक पहुँचने का मार्ग बंद करने लगे, तो दोष तकनीक का नहीं, उसके असीमित और अविवेकपूर्ण उपयोग का है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि शासन कुछ सरल प्रश्नों पर गंभीरता से विचार करे—क्या वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग की संख्या सीमित नहीं होनी चाहिए? क्या प्रत्येक बैठक की अधिकतम समय-सीमा निर्धारित नहीं होनी चाहिए? क्या जनसुनवाई के समय को पूर्णतः वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग-मुक्त घोषित नहीं किया जाना चाहिए? क्या नागरिक की समस्या किसी भी समीक्षा बैठक से कम महत्त्वपूर्ण है?

विडंबना यह है कि जिस तकनीक का उद्देश्य निर्णय प्रक्रिया को तेज करना था, वही कई बार निर्णयों की गति धीमी कर रही है। अधिकारी जब वास्तविक परिस्थितियों को देखने के बजाय केवल स्क्रीन पर प्रस्तुत आँकड़ों के आधार पर निर्णय लेने लगते हैं, तब प्रशासन धीरे-धीरे धरातल से कटने लगता है। आँकड़े कभी आँसू नहीं दिखाते, प्रस्तुति कभी पीड़ा नहीं सुनाती, और कोई भी डिजिटल स्लाइड उस किसान, मजदूर, व्यापारी, छात्र या वृद्ध की विवशता का स्थान नहीं ले सकती, जो अपने अधिकारी के सामने केवल दो मिनट चाहता है।

ऐसे समय में दूरदर्शन का वह स्वर्णिम दौर याद आता है, जब व्यंग्यकार जसपाल भट्टी अपने अमर धारावाहिक फ्लॉप शो में व्यवस्था पर मुस्कुराते हुए सबसे तीखा प्रहार करते थे। उनका वह प्रसिद्ध संवाद आज पहले से अधिक प्रासंगिक प्रतीत होता है—

"बधाई हो, आज बैठक में तय हो गया कि अगली बैठक कब होगी।"

तीन दशक पहले यह संवाद सरकारी बैठकों पर व्यंग्य था; आज यदि उसे थोड़ा बदल दिया जाए तो शायद वह यूँ सुनाई दे—

"बधाई हो, आज वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग में तय हो गया कि अगली वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग कब होगी।"

यदि यह केवल व्यंग्य नहीं, बल्कि प्रशासनिक यथार्थ बन जाए तो यह चिंता का विषय है। क्योंकि लोकतंत्र बैठकों से नहीं, विश्वास से चलता है; स्क्रीन से नहीं, संवाद से चलता है; और शासन की सबसे बड़ी उपलब्धि किसी प्रस्तुति का सफल समापन नहीं, बल्कि नागरिक की समस्या का समयबद्ध समाधान है।

प्रशासन को यह स्मरण रखना होगा कि इतिहास किसी अधिकारी को इस आधार पर याद नहीं रखता कि उसने कितनी वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग में भाग लिया, बल्कि इस आधार पर याद रखता है कि उसने कितने नागरिकों की आँखों में विश्वास लौटाया।

तकनीक का सम्मान कीजिए, पर उसे सिंहासन पर मत बैठाइए।

तकनीक शासन का साधन है, शासन का उद्देश्य नहीं। जिस दिन स्क्रीन नागरिक के चेहरे से अधिक महत्वपूर्ण हो जाएगी, उसी दिन लोकतंत्र की सबसे मूल्यवान स्क्रीन—जनविश्वास—धीरे-धीरे ब्लैकआउट होने लगेगी। ■

जब घर के भीतर हिंसा जन्म लेती है

भारतीय समाज में सदियों से यह विश्वास रहा है कि घर मनुष्य के जीवन का सबसे सुरक्षित आश्रय होता है। बाहर चाहे कितने ही संघर्ष क्यों न हों, व्यक्ति यह भरोसा लेकर घर लौटता है कि वहाँ उसे अपनापन, संवाद और सुरक्षा मिलेगी। किंतु जब वही घर भय का पर्याय बन जाए, जब विश्वास की जगह हिंसा ले ले और जब जीवनसाथी ही जीवन का सबसे बड़ा खतरा बन जाए, तब यह केवल एक परिवार की त्रासदी नहीं रहती; यह पूरे समाज की आत्मा को झकझोर देने वाला प्रश्न बन जाती है।

दिल्ली के पूर्वी विनोद नगर में घटित प्रियंका–मनीष प्रकरण ऐसी ही एक घटना है। दिल्ली पुलिस में कार्यरत हेड कांस्टेबल मनीष भाटी पर अपनी पत्नी प्रियंका की गोली मारकर हत्या करने का आरोप है। घटना के बाद वह फरार हो गया और लगभग छत्तीस घंटे बाद उसी सरकारी पिस्तौल से उसने स्वयं भी जीवन समाप्त कर लिया। मृतका के परिजनों ने दहेज प्रताड़ना और आर्थिक मांगों के गंभीर आरोप लगाए हैं, जबकि पुलिस सभी पहलुओं की जांच कर रही है। अब आरोपी की मृत्यु के कारण उस रात की पूरी सच्चाई शायद कभी सामने न आ सके।

लेकिन समाजशास्त्र केवल यह नहीं पूछता कि गोली किसने चलाई; वह यह भी पूछता है कि ऐसी परिस्थितियाँ किसने बनाई जिनमें एक रिश्ता हिंसा की अंतिम सीमा तक पहुँच गया।

अपराध कभी अकेला नहीं आता

समाचार हमें घटना बताते हैं, समाजशास्त्र हमें उसके कारण खोजने की दृष्टि देता है। कोई भी हिंसक अपराध शून्य में जन्म नहीं लेता। उसके पीछे अनेक छोटे-छोटे तनाव, अनकहे संवाद, टूटते विश्वास, सामाजिक दबाव, आर्थिक अपेक्षाएँ, पारिवारिक असंतुलन और मानसिक संघर्ष वर्षों तक जमा होते रहते हैं। गोली चलने का क्षण केवल अंतिम दृश्य होता है, वास्तविक त्रासदी तो बहुत पहले शुरू हो चुकी होती है।

लोकजीवन की एक पुरानी सीख है—

"दीमक पेड़ को बाहर से नहीं, भीतर से खोखला करती है।" रिश्तों का क्षय भी कुछ ऐसा ही होता है। बाहर से सब सामान्य दिखाई देता है, जबकि भीतर विश्वास धीरे-धीरे क्षीण हो रहा होता है।

विवाह: संस्कार से उपभोग तक की यात्रा

भारतीय सभ्यता ने विवाह को केवल सामाजिक अनुबंध नहीं, बल्कि एक नैतिक और सांस्कृतिक दायित्व माना। यह दो व्यक्तियों का ही नहीं, दो परिवारों और दो संस्कारों का मिलन था। किंतु बदलते समय में विवाह पर बाज़ार का प्रभाव बढ़ा है। प्रतिष्ठा, आर्थिक हैसियत और उपभोग की संस्कृति ने कई बार रिश्तों की आत्मीयता को पीछे धकेल दिया है।

यदि इस मामले में लगाए गए दहेज के आरोप जांच में सत्य सिद्ध होते हैं, तो यह केवल एक व्यक्ति का अपराध नहीं होगा; यह उस मानसिकता का दर्पण होगा जिसमें बेटी का सम्मान अभी भी धन के तराजू पर तौला जाता है।

विडंबना यह है कि शिक्षा बढ़ी, वेतन बढ़े, सुविधाएँ बढ़ीं, परंतु अनेक घरों में मानवीय मूल्य उसी अनुपात में नहीं बढ़ सके।

कहावत है—

"लालच की कोई मंज़िल नहीं होती; वह केवल रास्ते बदलता है।"

सरकारी और सामाजिक ओहदे का भार और मनुष्य की सीमा

समाज अक्सर ओहदे को शक्ति, अनुशासन और साहस का प्रतीक मानता है, और यह सत्य भी है। किंतु किसी विशेष ओहदे पर बैठने वाला व्यक्ति अपनी मानवीय सीमाओं से मुक्त नहीं हो जाता। वह भी तनाव से गुजरता है, संबंधों के संघर्ष झेलता है, मानसिक दबाव महसूस करता है और कभी-कभी भावनात्मक रूप से टूट भी जाता है।

यही कारण है कि आधुनिक लोकतांत्रिक समाजों में पुलिस और अन्य सुरक्षा बलों के लिए मानसिक स्वास्थ्य, भावनात्मक परामर्श और तनाव प्रबंधन को प्रशासनिक आवश्यकता माना जाने लगा है, न कि केवल व्यक्तिगत विषय। संवैधानिक और सामाजिक जिम्मेवारियां कानून की रक्षा कर सकती है, परंतु मन की शांति का स्थान नहीं ले सकती।

संवाद का मौन सबसे खतरनाक होता है

किसी भी परिवार का विघटन मतभेदों से नहीं, संवाद के समाप्त होने से शुरू होता है। आज हमारे पास संचार के असंख्य साधन हैं, लेकिन संवाद की संस्कृति सिकुड़ती जा रही है। मोबाइल की स्क्रीन पर सक्रिय परिवार, भावनात्मक स्तर पर कई बार एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं। हम सूचना साझा करते हैं, संवेदना नहीं। हम प्रतिक्रिया देते हैं, लेकिन एक-दूसरे को सुनते कम हैं। यही दूरी धीरे-धीरे अविश्वास को जन्म देती है।

लोक में कहा जाता है—

"बंद कमरे में सबसे पहले हवा दम तोड़ती है।" रिश्तों में भी सबसे पहले संवाद दम तोड़ता है और उसके बाद विश्वास।

क्रोध: क्षण भर का निर्णय, जीवन भर की सज़ा

इतिहास और मनोविज्ञान दोनों बताते हैं कि अनेक विनाशकारी निर्णय आवेश के कुछ क्षणों में लिए जाते हैं। क्रोध मनुष्य की विवेक-शक्ति को सीमित कर देता है और वही क्षण जीवन की दिशा बदल देता है।

यह घटना हमें फिर याद दिलाती है कि हिंसा कभी समाधान नहीं होती। वह केवल पीड़ा का विस्तार करती है। एक जीवन समाप्त होता है, दूसरा भी नष्ट हो जाता है और पीछे छूट जाते हैं ऐसे परिवार, जिन्हें वर्षों तक उत्तर नहीं, केवल आँसू मिलते हैं। भारतीय बौद्धिक चिंतन ने इसलिए संयम को सदैव वीरता माना है।

मानसिक स्वास्थ्य: समाज की सबसे उपेक्षित आवश्यकता

हमारे समाज में मानसिक पीड़ा को आज भी उतनी गंभीरता नहीं मिलती जितनी शारीरिक बीमारी को मिलती है। तनाव, अवसाद, वैवाहिक संघर्ष और भावनात्मक अकेलेपन को अक्सर व्यक्ति का निजी मामला मानकर छोड़ दिया जाता है। जबकि सच्चाई यह है कि मानसिक स्वास्थ्य केवल व्यक्ति का नहीं, पूरे समाज का प्रश्न है। परिवारों को ऐसा वातावरण बनाना होगा जहाँ शिकायतें दबाई न जाएँ, बल्कि सुनी जाएँ। कार्यस्थलों को ऐसा माहौल देना होगा जहाँ सहायता माँगना कमजोरी नहीं माना जाए। और समाज को यह स्वीकार करना होगा कि टूटता हुआ मन भी उपचार चाहता है।

यह घटना हमें क्या सिखाती है?

यह प्रकरण पाँच स्पष्ट संदेश छोड़ता है। पहला, दहेज जैसी कुप्रथाएँ केवल कानून से नहीं, सामाजिक अस्वीकार से समाप्त होंगी। दूसरा, परिवारों में संवाद की संस्कृति को पुनर्जीवित करना समय की आवश्यकता है। तीसरा, मानसिक स्वास्थ्य को सार्वजनिक विमर्श का हिस्सा बनाना होगा। चौथा, अधिकार और अहंकार के बीच की रेखा पहचाननी होगी। और पांचवा, और सबसे बढ़कर, हमें संबंधों को जीतने की नहीं, उन्हें निभाने की संस्कृति विकसित करनी होगी।

समाज की असली परीक्षा अदालत में नहीं, परिवार में होती है

कानून आवश्यक है, लेकिन वह अंतिम उपचार है। स्वस्थ समाज वह है जहाँ कानून को कम और संवाद को अधिक काम करना पड़े। परिवार केवल साथ रहने का नाम नहीं; वह विश्वास, समानता, धैर्य और परस्पर सम्मान का जीवंत अभ्यास है। यदि यही मूल्य कमजोर पड़ेंगे, तो समाज की सबसे मजबूत संस्थाएँ भी भीतर से खोखली होती जाएँगी।

भारतीय लोकबुद्धि का एक गहरा संदेश है—

"पेड़ की छाया फल से नहीं, जड़ों की मजबूती से मिलती है।" हमारे समाज की जड़ परिवार है। यदि परिवारों में विश्वास रहेगा, तो समाज में शांति रहेगी। यदि परिवारों में सम्मान रहेगा, तो कानून पर बोझ कम होगा। यदि परिवारों में संवाद रहेगा, तो हिंसा की संभावना घटेगी। प्रियंका और मनीष की यह त्रासदी केवल एक आपराधिक प्रकरण नहीं है। यह हमारे समय का सामाजिक दर्पण है, जो हमें यह सोचने के लिए विवश करता है कि विकास केवल सड़कों, इमारतों और तकनीक से नहीं मापा जा सकता। किसी भी सभ्यता का वास्तविक विकास इस बात से मापा जाता है कि उसके घरों में कितना विश्वास बचा है, उसके रिश्तों में कितनी संवेदना शेष है और उसके समाज में मनुष्य के जीवन का कितना सम्मान है। ■

जब बचपन बाजार में बिकने लगे

समाज की चुप्पी, संवेदनाओं का क्षरण और हमारी सामूहिक विफलता

किसी भी सभ्य समाज की असली पहचान उसकी ऊंची इमारतों, चौड़ी सड़कों या बढ़ती अर्थव्यवस्था से नहीं होती। उसकी वास्तविक पहचान इस बात से होती है कि वहां व्यवस्था एक आम नागरिक के प्रति कितनी समर्पित है। जिस समाज में बचपन भय, हिंसा और बाजार का हिस्सा बनने लगे, वहां केवल कानून नहीं, पूरी सामाजिक चेतना और व्यवस्था कठघरे में खड़ी होती है। राजस्थान के श्रीगंगानगर से सामने आई 13 वर्षीय नाबालिग बच्ची के साथ कथित सामूहिक दुष्कर्म और खरीद-फरोख्त की घटना केवल एक आपराधिक प्रकरण नहीं है। यह हमारे समय का ऐसा सामाजिक दस्तावेज है, जो बताता है कि विकास, आधुनिकता और तकनीकी प्रगति के तमाम दावों के बावजूद हमारी संवेदनाओं की नींव कितनी कमजोर होती जा रही है। इस घटना ने पूरे देश को झकझोर दिया है। स्वाभाविक भी है, क्योंकि यहां केवल एक बच्ची पर अत्याचार नहीं हुआ, बल्कि बचपन, विश्वास और मानवता—तीनों पर एक साथ हमला हुआ है। समाजशास्त्र हमें सिखाता है कि कोई भी अपराध अकेले पैदा नहीं होता। अपराध का जन्म केवल अपराधी के भीतर नहीं होता; वह समाज की उन दरारों में पनपता है जहां लालच, चुप्पी, लापरवाही और नैतिक पतन एक-दूसरे का हाथ पकड़ लेते हैं। इसलिए ऐसी घटनाओं को केवल पुलिस की एफआईआर या अदालत के मुकदमे तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता। इनके भीतर समाज की संरचना, सत्ता की कार्यशैली, बाजार की मानसिकता, परिवारों की बदलती भूमिका और नागरिक चेतना के अनेक प्रश्न छिपे होते हैं।

भारतीय समाज में एक कहावत प्रचलित है—"आग लगने पर ही कुआं नहीं खोदा जाता।" लेकिन दुखद सच्चाई यह है कि हम अक्सर हर बड़ी त्रासदी के बाद ही जागते हैं। घटना होती है, आक्रोश उमड़ता है, प्रदर्शन होते हैं, प्रशासन सक्रिय दिखाई देता है और कुछ समय बाद सब कुछ सामान्य हो जाता है। फिर किसी दूसरे शहर से वैसी ही एक और खबर आ जाती है। यह चक्र वर्षों से चल रहा है। प्रश्न यह है कि आखिर हम हर बार केवल प्रतिक्रिया ही क्यों देते हैं? क्या हमारी सामाजिक व्यवस्था में ऐसी घटनाओं को रोकने की क्षमता विकसित नहीं हो पा रही, या हमने उन्हें धीरे-धीरे सामान्य मान लेना शुरू कर दिया है?

इस घटना का सबसे भयावह पक्ष यह नहीं कि कुछ दरिंदों ने कानून तोड़ा। सबसे भयावह पक्ष यह है कि एक मासूम बच्ची कथित रूप से कई दिनों तक विभिन्न स्थानों पर ले जाई जाती रही, अनेक लोगों के संपर्क में आई, लेकिन व्यवस्था की कोई परत समय रहते उसे बचा नहीं सकी। इसका अर्थ यह है कि कहीं न कहीं हमारी सामाजिक निगरानी कमजोर हुई है। पहले मोहल्ले की निगाहें भी सुरक्षा का माध्यम थीं। पड़ोसी,

दुकानदार, रिक्शा चालक, शिक्षक और स्थानीय समाज किसी बच्चे की असामान्य स्थिति को देखकर सतर्क हो जाते थे। आज शहरों में भीड़ तो बढ़ी है, लेकिन सामाजिक संबंध सिकुड़ते चले गए हैं। हम एक-दूसरे के इतने निकट रहकर भी एक-दूसरे से इतने दूर हो गए हैं कि किसी अनजान बच्चे की पीड़ा भी हमें अपनी जिम्मेदारी नहीं लगती। समाजशास्त्री एमिल दुर्खीम ने सामाजिक एकजुटता को समाज की सबसे बड़ी ताकत माना था। जब यह एकजुटता कमजोर होती है, तब केवल अपराध नहीं बढ़ते, बल्कि लोगों के भीतर दूसरों के दुख के प्रति संवेदनशीलता भी कम होने लगती है। यही कारण है कि आज तकनीक ने हमें जोड़ तो दिया है, लेकिन मनुष्य से मनुष्य का रिश्ता कहीं अधिक कमजोर हुआ है। मोबाइल पर हम दुनिया देख लेते हैं, पर अपने आसपास घट रही असामान्य घटनाओं को देखने की फुर्सत खो चुके हैं।

इस घटना का दूसरा गंभीर पक्ष बाजारवाद की मानसिकता से जुड़ा है। बाजार अपने आप में बुरा नहीं होता, लेकिन जब मनुष्य की कीमत धन से कम हो जाए, तब वही बाजार अमानवीयता का रूप धारण कर लेता है। किसी बच्ची की खरीद-फरोख्त का आरोप केवल एक अपराध नहीं, बल्कि उस सोच का परिणाम है जिसमें इंसान भी वस्तु बन जाता है। समाजशास्त्र में इसे 'वस्तुकरण' कहा जाता है—जब व्यक्ति की गरिमा समाप्त कर उसे केवल उपयोग की चीज समझ लिया जाता है। यही सोच मानव तस्करी, देह व्यापार और बाल शोषण जैसी भयावह घटनाओं को जन्म देती है। कहावत है—"लोभ का पेट कभी नहीं भरता।" लालच जब नैतिकता पर हावी हो जाता है, तब मनुष्य अपनी आत्मा का सौदा भी कर देता है। इतिहास गवाह है कि जिन समाजों में धन को चरित्र से ऊपर रखा गया, वहां अपराध केवल बढ़े ही नहीं, बल्कि धीरे-धीरे सामाजिक स्वीकृति भी पाने लगे। यह स्थिति किसी भी लोकतांत्रिक समाज के लिए सबसे बड़ा खतरा होती है। इस पूरी घटना ने एक और प्रश्न खड़ा किया है—क्या केवल कठोर कानून पर्याप्त हैं? पिछले वर्षों में महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा के लिए अनेक कानून बने, दंड कठोर हुए, विशेष अदालतें गठित हुईं। फिर भी ऐसी घटनाएं क्यों रुक नहीं रहीं? इसका उत्तर समाजशास्त्र बहुत स्पष्ट देता है। अपराध केवल दंड की कठोरता से नहीं रुकते, बल्कि दंड की निश्चितता से रुकते हैं। यदि अपराधी को विश्वास हो कि पकड़ा जाना तय है, जांच निष्पक्ष होगी और न्याय समयबद्ध मिलेगा, तब कानून का भय वास्तविक बनता है। लेकिन यदि व्यवस्था की प्रतिक्रिया देर से हो, निगरानी कमजोर हो और जांच लंबी खिंच जाए, तो कठोर से कठोर कानून भी अपना प्रभाव खो देते हैं।

इस घटना ने प्रशासनिक जवाबदेही पर भी गंभीर प्रश्न खड़े किए हैं। यदि किसी क्षेत्र में अवैध गतिविधियां लंबे समय तक चलती रहें, तो यह केवल अपराधियों की सफलता नहीं होती; यह निगरानी तंत्र की कमजोरी का भी संकेत है। प्रशासन का दायित्व केवल घटना के बाद गिरफ्तारी करना नहीं, बल्कि ऐसी परिस्थितियां ही पैदा न होने देना है जिनमें अपराध फल-फूल सके। कानून का अर्थ केवल दंड देना नहीं, बल्कि भयमुक्त वातावरण तैयार करना भी है।

लेकिन केवल प्रशासन को दोष देकर समाज अपनी जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकता। परिवार भी इस विमर्श का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। बदलते समय में बच्चों को आधुनिक शिक्षा तो मिल रही है, लेकिन जीवन सुरक्षा की शिक्षा उतनी व्यवस्थित नहीं मिल पा रही। बच्चों के साथ खुला संवाद, उनके व्यवहार में आए बदलावों पर ध्यान, सुरक्षित और असुरक्षित परिस्थितियों की जानकारी, विश्वास का वातावरण—ये सब सुरक्षा के उतने ही महत्वपूर्ण साधन हैं जितना कोई कानून। बच्चे डर के कारण नहीं, विश्वास के कारण अपनी बात बताते हैं।

यह भी ध्यान रखना होगा कि हर ऐसी घटना के बाद हमारा आक्रोश केवल सोशल मीडिया तक सीमित न रह जाए। डिजिटल युग में कुछ दिनों तक हैशटैग चलते हैं, फिर समाज किसी नए विषय की ओर बढ़ जाता है। लेकिन पीड़ित परिवार के लिए संघर्ष वहीं से शुरू होता है जहां समाज का ध्यान समाप्त हो जाता है। इसलिए न्याय केवल अदालत का निर्णय नहीं, बल्कि पीड़ित के पुनर्वास, सम्मान और सामाजिक स्वीकार्यता से भी जुड़ा हुआ प्रश्न है।

मीडिया की भूमिका भी इस संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है। जिम्मेदार पत्रकारिता का उद्देश्य केवल सनसनी पैदा करना नहीं, बल्कि समाज को उसके आईने से परिचित कराना है। पीड़िता की गरिमा की रक्षा करते हुए, तथ्यों की पुष्टि के साथ और संवेदनशील भाषा में ऐसी घटनाओं को सामने लाना लोकतंत्र की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। जब पत्रकारिता केवल टीआरपी का माध्यम बन जाती है, तब समाज समस्या को समझने के बजाय उसे उपभोग की वस्तु की तरह देखने लगता है। यह प्रवृत्ति भी चिंताजनक है।

भारत की लोक संस्कृति में एक कहावत कही जाती है—"बाड़ ही खेत खाने लगे तो किसान किस पर भरोसा करे?" यह कहावत केवल व्यवस्था पर नहीं, पूरे समाज पर लागू होती है। यदि सुरक्षा देने वाली संस्थाएं कमजोर पड़ जाएं, यदि नागरिक चुप रहें, यदि लालच इंसानियत पर भारी पड़ जाए और यदि बच्चों की सुरक्षा सामूहिक प्राथमिकता न रहे, तो फिर सभ्यता के सारे दावे खोखले प्रतीत होने लगते हैं। आज आवश्यकता केवल कठोर दंड की मांग करने की नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने सामाजिक ढांचे की समीक्षा करें। विद्यालयों में बाल सुरक्षा शिक्षा को व्यवहारिक बनाया जाए, स्थानीय समुदायों को अधिक सजग किया जाए, बाल संरक्षण संस्थाओं को संसाधन और अधिकार दोनों दिए जाएं, अवैध गतिविधियों पर नियमित निगरानी हो, और सबसे बढ़कर यह समझ विकसित की जाए कि किसी भी बच्चे की सुरक्षा केवल उसके परिवार की नहीं, पूरे समाज की जिम्मेदारी है। अंततः यह घटना हमें एक कठिन लेकिन आवश्यक प्रश्न पूछने के लिए विवश करती है—क्या हम केवल आर्थिक रूप से विकसित होना चाहते हैं, या नैतिक रूप से भी एक सभ्य समाज बनना चाहते हैं? यदि विकास के बीच संवेदनाएं खो जाएं, यदि प्रगति के साथ करुणा समाप्त हो जाए और यदि बच्चों का बचपन सुरक्षित न रहे, तो ऐसी प्रगति अधूरी है। एक राष्ट्र की सबसे बड़ी पूंजी उसकी सड़कें, उद्योग या इमारतें नहीं होतीं; उसकी सबसे बड़ी पूंजी उसका सुरक्षित बचपन होता है। जिस दिन हर बच्चा बिना भय के जी सकेगा, उसी दिन हम वास्तव में विकसित समाज कहलाने के अधिकारी होंगे। उससे पहले हर ऐसी घटना केवल एक अपराध नहीं, बल्कि हमारी सामूहिक चेतना की असफलता का मौन अभियोग बनी रहेगी। ■

बदलते समय में परिवार, स्वार्थ और संवेदनाओं का संकट

जब रिश्ते उत्तराधिकार बन जाएँ

रिश्ते जन्म से मिलते हैं, लेकिन उनका अस्तित्व विश्वास, संवेदना और त्याग से बना रहता है। जिस दिन विश्वास मर जाता है, उसी दिन रक्त संबंध भी केवल कानूनी पहचान बनकर रह जाते हैं।" कुछ घटनाएँ समाचार नहीं होतीं, समय का दस्तावेज़ बन जाती हैं। वे किसी एक परिवार की त्रासदी भर नहीं होतीं, बल्कि पूरे समाज के अंतर्मन में उठ रहे उन सवालों को सामने लाती हैं जिन्हें हम अक्सर विकास, व्यस्तता और आधुनिकता की चमक में अनदेखा कर देते हैं। जयपुर की हालिया घटना भी ऐसी ही एक घटना है। पुलिस के अनुसार, एक महिला की हत्या को सड़क दुर्घटना का रूप देने की कथित साजिश रची गई। जाँच में सामने आया कि हत्या के पीछे अनुकंपा नियुक्ति और संपत्ति पर अधिकार पाने का लालच था तथा आरोपों के केंद्र में मृतका की अपनी बेटी सहित परिवार के अन्य सदस्य बताए गए। न्यायालय का अंतिम निर्णय अभी शेष है और किसी भी आरोपी को दोषी ठहराने का अधिकार केवल न्यायपालिका को है। किंतु इस घटना ने एक ऐसा प्रश्न अवश्य हमारे सामने रख दिया है, जिससे कोई भी संवेदनशील समाज आँखें नहीं मूँद सकता—

क्या आधुनिक समाज में रिश्तों की जगह धीरे-धीरे उत्तराधिकार लेता जा रहा है?

यह प्रश्न केवल जयपुर का नहीं है। यह उस बदलती सामाजिक मानसिकता का प्रश्न है, जहाँ परिवार धीरे-धीरे भावनात्मक संस्था से आर्थिक संस्था में बदलता दिखाई देता है। भारतीय समाज में परिवार केवल रक्त संबंधों का समूह नहीं था। वह संस्कारों की पहली पाठशाला, सुरक्षा का पहला आश्रय, न्याय का पहला मंच और प्रेम का पहला विद्यालय था। बच्चा बोलना सीखने से पहले अपनापन सीखता था, और चलना सीखने से पहले दूसरों का हाथ पकड़ना सीखता था। इसलिए हमारे यहाँ कहा गया—"मातृदेवो भवः, पितृदेवो भवः।" यह केवल धार्मिक उद्घोष नहीं, बल्कि सामाजिक अनुशासन का सबसे बड़ा सूत्र था। पुरानी कहावत है—"घर वही, जहाँ मन को सुकून मिले।" लेकिन यदि घर ही भय, अविश्वास और प्रतिस्पर्धा का केंद्र बन जाए, तो समाज की सबसे मजबूत संस्था भीतर से कमजोर होने लगती है।

जब रिश्तों का मूल्य बाज़ार तय करने लगे

भारतीय परिवारों की सबसे बड़ी पूँजी धन नहीं, बल्कि भावनात्मक विश्वास था। संयुक्त परिवारों में केवल आय नहीं बँटती थी; जिम्मेदारियाँ, संस्कार, दुःख और खुशियाँ भी साझा होती थीं। आर्थिक साधन सीमित थे, लेकिन मनुष्य संबंधों में समृद्ध था। पिछले तीन-चार दशकों में परिस्थितियाँ तेजी से बदलीं। शहरीकरण बढ़ा, संयुक्त परिवार छोटे हुए, उपभोक्तावादी संस्कृति का विस्तार हुआ, प्रतिस्पर्धा तीव्र हुई और सफलता का अर्थ धीरे-धीरे धन, पद

और संपत्ति तक सीमित होता गया। यह परिवर्तन अपने साथ अनेक सकारात्मक उपलब्धियाँ भी लेकर आया—शिक्षा, आत्मनिर्भरता, अवसर और समानता। लेकिन इसके समानांतर एक ऐसा बदलाव भी आया, जिसने रिश्तों की आत्मा को चुनौती दी।

आज कई परिवारों में संवाद कम है, लेकिन संपत्ति की चर्चा अधिक है; साथ बैठकर भोजन कम होता है, लेकिन उत्तराधिकार की गणना अधिक होती है। एक पुरानी लोकोक्ति है—"जितनी चादर हो, उतने ही पैर फैलाओ।" यह केवल आर्थिक अनुशासन नहीं सिखाती थी, बल्कि संतोष का मूल्य भी बताती थी। आज उसकी जगह एक नई मानसिकता विकसित होती दिखाई देती है—"जितना मिल सके, उतना हासिल करो।" यही परिवर्तन समाजशास्त्रियों की चिंता का विषय है।

अनुकंपा नियुक्ति: संवेदना से स्वार्थ तक का सफर

अनुकंपा नियुक्ति की अवधारणा भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था की सबसे मानवीय व्यवस्थाओं में से एक है। इसका उद्देश्य यह था कि यदि किसी सरकारी कर्मचारी की असामयिक मृत्यु हो जाए, तो उसका परिवार आर्थिक संकट में न डूबे। यह व्यवस्था प्रतियोगिता नहीं, करुणा की भावना पर आधारित थी। यदि कभी ऐसी व्यवस्था भी कथित रूप से लालच का कारण बनने लगे, तो यह केवल कानून का नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का संकट है। समस्या अनुकंपा नियुक्ति में नहीं, बल्कि उस मानसिकता में है जो हर व्यवस्था को लाभ-हानि के तराजू पर तौलने लगती है। यही कारण है कि जयपुर की घटना केवल पुलिस की केस डायरी का विषय नहीं रह जाती; वह समाजशास्त्र, मनोविज्ञान और नैतिक दर्शन का भी विषय बन जाती है।

समाज बदलता है, तो अपराधों का स्वरूप भी बदलता है

समाजशास्त्र हमें बताता है कि अपराध केवल व्यक्ति की व्यक्तिगत विफलता नहीं होते। वे समाज की संरचनात्मक परिस्थितियों, आर्थिक दबावों, सांस्कृतिक परिवर्तनों और नैतिक मानकों के क्षरण से भी प्रभावित होते हैं। जब समाज लगातार यह संदेश देता है कि सफलता ही सर्वोच्च मूल्य है, तब कुछ लोग सफलता पाने के लिए साधनों की पवित्रता को महत्व देना छोड़ देते हैं।

आज बच्चों से सबसे अधिक पूछा जाता है— "बड़े होकर क्या बनोगे?"बहुत कम लोग पूछते हैं, "बड़े होकर कैसे इंसान बनोगे?" यही छोटा-सा अंतर आगे चलकर समाज की दिशा तय करता है। क्या केवल नई पीढ़ी दोषी है? इस प्रश्न का उत्तर भी सरल नहीं है।

नई पीढ़ी वही सीखती है, जो वह अपने आसपास देखती है। यदि परिवार में सम्मान का आधार केवल आय, पद और संपत्ति हो, यदि सफलता का अर्थ केवल भौतिक उपलब्धियाँ रह जाएँ, यदि बच्चों के सामने रिश्तों से अधिक धन की चर्चा हो, तो उनसे अलग सोच की अपेक्षा करना भी उचित नहीं होगा।

कहा भी गया है—"जैसा बोओगे, वैसा काटोगे।"

संस्कार केवल उपदेशों से नहीं, जीवन के व्यवहार से बनते हैं। रिश्ते निवेश नहीं, विश्वास होते हैं बाज़ार में हर वस्तु की कीमत होती है, लेकिन रिश्तों का मूल्य नहीं होता। कबीर ने सदियों पहले लिखा था—

"ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहुं शीतल होय।।"

यदि इस दोहे की भावना परिवारों में जीवित रहे, तो शायद अनेक विवाद जन्म लेने से पहले ही समाप्त हो जाएँ। दुर्भाग्य यह है कि आज संवाद की जगह संदेह, सहयोग की जगह प्रतिस्पर्धा और अपनत्व की जगह अपेक्षाओं ने ले ली है। परिणामस्वरूप परिवार धीरे-धीरे भावनात्मक सुरक्षा का केंद्र न रहकर तनाव का केंद्र बनने लगता है।

सोशल मीडिया और उपभोक्तावादी संस्कृति का दबाव

आज हर व्यक्ति दूसरे की उपलब्धियाँ देखता है, लेकिन उसके संघर्ष नहीं। दिखावे की संस्कृति ने इच्छाओं को इतना विस्तृत कर दिया है कि संतोष अब गुण नहीं, बल्कि कमजोरी माना जाने लगा है।

पुरानी कहावत—"लालच बुरी बला है"—आज पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक प्रतीत होती है। जब इच्छाएँ अनियंत्रित हों और नैतिक सीमाएँ कमजोर पड़ जाएँ, तब व्यक्ति अपने सबसे निकट के रिश्तों को भी साधन की तरह देखने लगता है। यही वह मनोवैज्ञानिक परिवर्तन है, जो किसी भी सभ्य समाज के लिए सबसे बड़ा खतरा है।

कानून समाधान है, लेकिन पर्याप्त नहीं

कठोर कानून आवश्यक हैं। अपराधियों को दंड मिलना चाहिए। न्याय व्यवस्था समाज में विश्वास बनाए रखने का महत्वपूर्ण आधार है।

लेकिन एक प्रश्न फिर भी शेष रहता है—

क्या केवल कानून रिश्तों को बचा सकता है?

उत्तर है—नहीं।

कानून अपराध रोक सकता है, लेकिन प्रेम नहीं पैदा कर सकता। अदालत न्याय दे सकती है, लेकिन परिवार में विश्वास नहीं लौटा सकती।

रिश्ते बचते हैं—

संवाद से, संस्कारों से, करुणा से, साझी जिम्मेदारियों से, और इस विश्वास से कि जीवन की सबसे बड़ी विरासत बैंक बैलेंस नहीं, बल्कि चरित्र होता है।

सभ्यता की असली परीक्षा

किसी राष्ट्र की महानता केवल उसकी अर्थव्यवस्था, ऊँची इमारतों, चौड़ी सड़कों या तकनीकी प्रगति से नहीं मापी जाती। उसकी वास्तविक पहचान इस बात से होती है कि वहाँ माँ अपने बच्चे पर कितना भरोसा कर सकती है, पिता अपने परिवार में कितना सुरक्षित महसूस करता है, बुज़ुर्ग स्वयं को कितना सम्मानित पाते हैं और कठिन समय में परिवार प्रतिस्पर्धी नहीं, बल्कि सहारा बनता है। भारतीय संस्कृति ने इसलिए "वसुधैव कुटुम्बकम्" का विचार दिया था। उसका अर्थ केवल पूरी दुनिया को परिवार मानना नहीं है; उसका पहला अर्थ अपने परिवार को भी परिवार बनाए रखना है।

अंततः... जयपुर की यह घटना कल न्यायालय की फाइलों का हिस्सा बन जाएगी। दोषी कौन है, इसका निर्णय अदालत करेगी। किंतु इस घटना ने समाज के सामने जो प्रश्न रखा है, वह लंबे समय तक हमारे साथ रहेगा। क्या हम अपनी अगली पीढ़ी को केवल संपत्ति देकर जाना चाहते हैं, या ऐसे संस्कार भी देना चाहते हैं जिनके कारण वे मनुष्य को संपत्ति से बड़ा समझें? क्योंकि इतिहास गवाह है—सभ्यताएँ तब नष्ट नहीं होतीं जब उनके खजाने खाली हो जाते हैं; वे तब कमजोर पड़ती हैं जब उनके परिवारों से विश्वास, करुणा और नैतिकता विदा हो जाती है। इसलिए आज आवश्यकता केवल अपराध की निंदा करने की नहीं, बल्कि परिवार की आत्मा को पुनर्जीवित करने की है। क्योंकि जिस समाज में उत्तराधिकार रिश्तों से बड़ा हो जाए, वहाँ संपत्ति तो बच सकती है, पर सभ्यता नहीं। ■

परंपराओं का पुनर्पाठ

जब कन्यादान ने रिश्तों को नहीं सोच को नया जन्म दिया

"परंपराएँ तब तक जीवित रहती हैं, जब तक वे मनुष्य के जीवन को सहज, सम्मानजनक और सुखद बनाने का कार्य करती हैं। जिस दिन वे जीवन पर बोझ बनने लगती हैं, उसी दिन उनके पुनर्पाठ की आवश्यकता शुरू हो जाती है।" मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल से सामने आई एक घटना ने यह सिद्ध कर दिया कि समाज का वास्तविक विकास ऊँची इमारतों, आधुनिक तकनीक या आर्थिक प्रगति से नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं से होता है। ग्राम भौंरी में किसान दिनेश बैरागी ने अपनी विधवा बहू प्रियंका का पुनर्विवाह कराकर केवल एक सामाजिक दायित्व नहीं निभाया, बल्कि उस सोच को चुनौती दी, जो वर्षों से विधवा के जीवन को अतीत की कैद में रखने की कोशिश करती रही है। सबसे भावुक क्षण तब आया, जब उन्होंने स्वयं पिता बनकर प्रियंका का कन्यादान किया। यह दृश्य केवल एक विवाह संस्कार नहीं था, बल्कि समाज के सामने यह घोषणा भी थी कि रिश्ते केवल रक्त से नहीं, बल्कि संवेदनाओं और उत्तरदायित्व से बनते हैं।

एक परिवार, जिसने शोक को साहस में बदल दिया

दिनेश बैरागी के पुत्र कपिल बैरागी का विवाह वर्ष 2018 में प्रियंका से हुआ था। कुछ समय बाद कपिल कैंसर जैसी गंभीर बीमारी की चपेट में आ गए। लंबे उपचार के बाद वर्ष 2024 में उनका निधन हो गया। यह परिवार के लिए असहनीय आघात था। सामान्यतः ऐसे अवसरों पर परिवार स्वयं दुःख में डूब जाता है और विधवा बहू का जीवन अनिश्चितताओं के हवाले हो जाता है। लेकिन बैरागी परिवार ने दुःख को संवेदना में बदल दिया। उन्होंने यह स्वीकार किया कि बेटे की स्मृति को जीवित रखने का सबसे अच्छा तरीका यह नहीं कि बहू का जीवन भी अतीत के साथ समाप्त मान लिया जाए, बल्कि उसे नए भविष्य की ओर बढ़ाया जाए। सोमवार को प्रियंका का विवाह विदिशा जिले के ग्राम अरारी खेजड़ा निवासी गोबिंद बैरागी से पूरे वैदिक रीति-रिवाजों के साथ सम्पन्न कराया गया। विवाह की हर जिम्मेदारी दिनेश बैरागी और उनके परिवार ने निभाई। वहीं प्रियंका के पिता रामबाबू बैरागी भावुक होकर स्वीकार करते हैं कि उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि बेटी के ससुराल वाले उसके पुनर्विवाह का पूरा दायित्व अपने कंधों पर उठाएंगे। यह घटना केवल एक परिवार की नहीं, बल्कि पूरे समाज के लिए एक दर्पण है।

परंपरा का उद्देश्य जीवन है, जीवन का उद्देश्य परंपरा नहीं

हमारे समाज में प्रथा, परंपरा, रीति-रिवाज और सामाजिक प्रचलन किसी पुस्तक के पन्नों पर लिखे नियम नहीं हैं। ये हजारों वर्षों के सामूहिक अनुभवों का परिणाम हैं। किसी समय समाज ने जो उचित समझा, वह परंपरा बन गया। लेकिन समय स्थिर नहीं रहता। परिस्थितियाँ बदलती हैं, समाज बदलता है, परिवार बदलते हैं और मनुष्य की आवश्यकताएँ भी बदलती हैं। इसीलिए परंपराएँ भी समय-समय पर

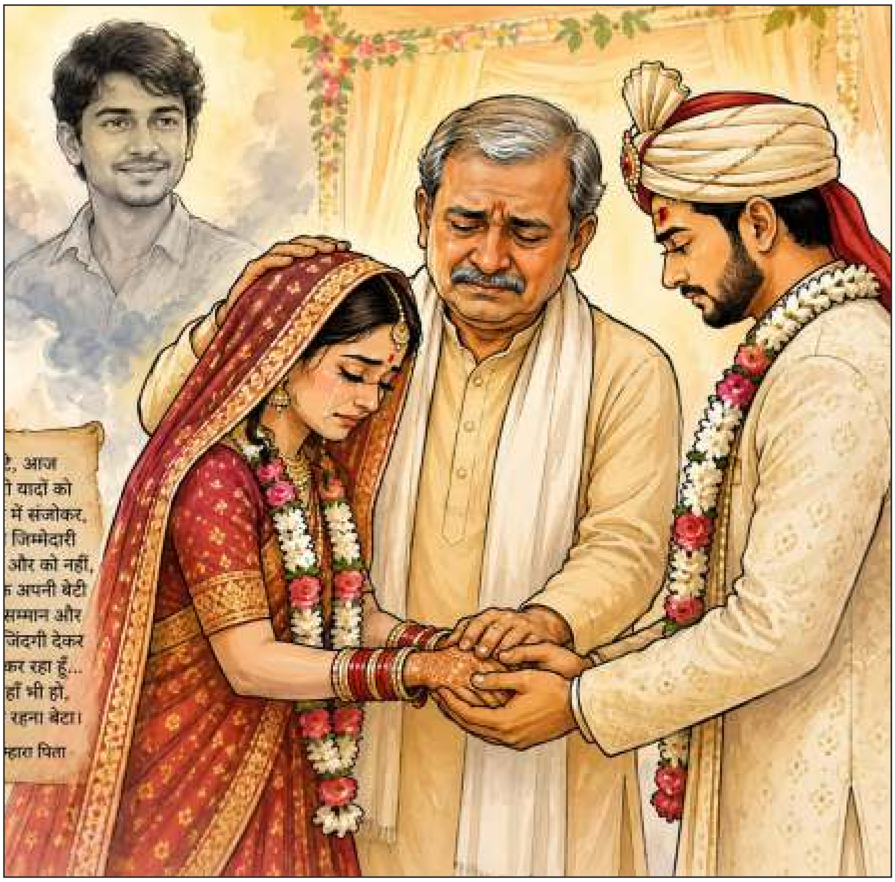

अपने स्वरूप में परिवर्तन चाहती हैं। बहता हुआ पानी निर्मल रहता है, जबकि ठहरा हुआ पानी सड़ने लगता है। यही सिद्धांत समाज और उसकी परंपराओं पर भी लागू होता है। यदि कोई परंपरा मनुष्य के सम्मान, स्वतंत्रता और सुख में सहायक है तो उसे संरक्षित किया जाना चाहिए। लेकिन यदि वही परंपरा किसी व्यक्ति के जीवन को बोझ, पीड़ा या अन्याय में बदल दे, तो उसका पुनर्मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है।

परिवर्तन कोई विद्रोह नहीं, परंपरा का विस्तार है

अक्सर समाज में दो पीढ़ियों के बीच सबसे बड़ा विवाद परंपराओं को लेकर होता है। पुरानी पीढ़ी उन्हें अक्षरशः बनाए रखना चाहती है, जबकि नई पीढ़ी कई बार उन्हें पूरी तरह अस्वीकार कर देती है। दोनों ही अतिवाद समाज के लिए उचित नहीं हैं। हर पुरानी बात गलत नहीं होती और हर नई बात सही नहीं होती। समझदारी इस बात में है कि हम परंपरा के मूल उद्देश्य को पहचानें। यदि उसका उद्देश्य आज भी प्रासंगिक है तो उसे बनाए रखें और यदि उसके स्वरूप में परिवर्तन की आवश्यकता है तो उसे स्वीकार करने का साहस दिखाएँ। बैरागी परिवार ने यही किया। उन्होंने विवाह की परंपरा को छोड़ा नहीं। उन्होंने कन्यादान की परंपरा को भी नकारा नहीं। बल्कि उसी परंपरा को नई संवेदना के साथ जीवित कर दिया। यही जीवंत संस्कृति की पहचान है।

इतिहास भी इसी परिवर्तन का साक्षी है

भारतीय समाज का इतिहास ऐसे अनेक उदाहरणों से भरा हुआ है, जहाँ समाज सुधारकों ने परंपराओं को नष्ट नहीं किया बल्कि उन्हें अधिक मानवीय बनाया। सती प्रथा का विरोध हुआ। विधवा पुनर्विवाह को सामाजिक स्वीकृति दिलाने का संघर्ष हुआ। बाल विवाह के विरुद्ध कानून बने। बालिकाओं की शिक्षा को बढ़ावा मिला। अस्पृश्यता के विरुद्ध आंदोलन चले। इन सभी सुधारों का उद्देश्य भारतीय संस्कृति को समाप्त करना नहीं था, बल्कि उसे अधिक न्यायपूर्ण, मानवीय और समावेशी बनाना था। समाज इसलिए आगे बढ़ा क्योंकि उसने अनुभवों को बचाए रखते हुए समय की माँग के अनुसार परिवर्तन स्वीकार किया।

सबसे बड़ा धर्म संवेदना है

धर्म का मूल अर्थ धारण करना है—वह जो समाज

को जोड़कर रखे। यदि कोई परंपरा मनुष्य को तोड़ने लगे तो वह अपने मूल उद्देश्य से भटक जाती है। दिनेश बैरागी ने अपनी बहू को बेटी मानकर विदा किया। यह केवल रिश्ते का विस्तार नहीं था, बल्कि भारतीय पारिवारिक संस्कृति के सबसे सुंदर स्वरूप का परिचय था। उन्होंने यह संदेश दिया कि पुत्र की मृत्यु के साथ बहू का जीवन समाप्त नहीं होता। एक पिता केवल जन्म देने वाला नहीं होता; जो जीवन संवार दे, वही सच्चे अर्थों में पिता कहलाने का अधिकारी है।

बदलाव की सबसे बड़ी कमी कानून नहीं, साहस है

आज विधवा पुनर्विवाह कानूनी और सामाजिक रूप से स्वीकार्य है। संविधान भी समानता का अधिकार देता है। लेकिन व्यवहारिक जीवन में ऐसे उदाहरण अभी भी बहुत कम दिखाई देते हैं। कारण यह नहीं कि रास्ता बंद है। कारण यह है कि उस रास्ते पर चलने का साहस कम है। बैरागी परिवार ने वही साहस दिखाया है। उन्होंने किसी आंदोलन का नेतृत्व नहीं किया, कोई भाषण नहीं दिया, कोई नारा नहीं लगाया। उन्होंने केवल अपने घर में सही निर्णय लिया। कई बार समाज को बदलने के लिए बड़े मंचों की नहीं, एक छोटे से आँगन की आवश्यकता होती है।

समाज के लिए एक आईना

यह घटना केवल प्रियंका के पुनर्विवाह की कहानी नहीं है। यह उस सोच की जीत है जो कहती है कि रिश्तों का मूल्य परंपरा से नहीं, संवेदना से तय होता है। जब परिवार अपने भीतर परिवर्तन स्वीकार करता है, तभी समाज बदलता है। जब समाज बदलता है, तभी परंपराएँ जीवित रहती हैं। और जब परंपराएँ जीवित रहती हैं, तभी संस्कृति आगे बढ़ती है।

परंपराएँ पत्थर नहीं, प्रवाहित होती नदी हैं

समाज की सबसे बड़ी शक्ति उसकी स्मृतियाँ हैं और सबसे बड़ी कमजोरी उसका जड़ हो जाना। परंपराएँ यदि पत्थर बन जाएँ तो रास्ता रोक देती हैं, लेकिन यदि नदी बन जाएँ तो पीढ़ियों को जीवन देती हैं। भोपाल के बैरागी परिवार ने कोई नई परंपरा नहीं बनाई। उन्होंने केवल एक पुरानी परंपरा का हृदय फिर से धड़कता हुआ दिखा दिया। उन्होंने बता दिया कि संस्कृति का अर्थ अतीत को ढोना नहीं, बल्कि उसके श्रेष्ठ मूल्यों को वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुरूप जीना है। कहावत है—"वृक्ष वही फलता है जिसकी जड़ें मजबूत हों और जिसकी शाखाएँ फैलने की स्वतंत्रता रखती हों।" यही बात समाज पर भी लागू होती है। जड़ों को काट देना मूर्खता है और शाखाओं को बढ़ने से रोक देना भी उतना ही घातक है। आज आवश्यकता न तो परंपराओं के अंध-समर्थन की है और न ही उनके अंध-विरोध की। आवश्यकता है विवेकपूर्ण पुनर्पाठ की—जहाँ अनुभव भी सुरक्षित रहें और इंसान भी। भोपाल की यह घटना हमें यही सिखाती है कि परंपराओं का अंतिम उद्देश्य मनुष्य को सुखी, सम्मानित और सुरक्षित बनाना है। जब वे इस उद्देश्य के साथ समय के अनुसार स्वयं को बदलती हैं, तभी वे युगों-युगों तक समाज का मार्गदर्शन करती हैं। यही इस घटना का सबसे बड़ा संदेश है और यही इसकी सबसे बड़ी सामाजिक उपलब्धि भी। ■

कुत्ता-प्रेम या मानव-प्रेम?

अतिवाद नहीं संतुलित समाधान की जरूरत

सभ्यता की पहचान इस बात से नहीं होती कि वह पशुओं से कितना प्रेम करती है, बल्कि इस बात से होती है कि वह मनुष्य और पशु—दोनों के अधिकारों के बीच कितना न्यायपूर्ण संतुलन स्थापित करती है।"

भारतीय समाज में मनुष्य और पशु का संबंध केवल उपयोगिता का नहीं, बल्कि आत्मीयता, संवेदना और सह-अस्तित्व का रहा है। हमारी संस्कृति में गाय को माता कहा गया, बैलों को खेती का साथी माना गया, घोड़े ने युद्ध और यात्राओं में मनुष्य का साथ निभाया, हाथियों ने राजसत्ता की गरिमा बढ़ाई और कुत्ते ने सदियों तक घर की चौखट का प्रहरी बनकर निष्ठा का परिचय दिया। यही कारण है कि भारतीय परिवारों में पहली रोटी गाय के लिए और अंतिम निवाला कुत्ते के लिए निकालने की परंपरा आज भी अनेक घरों में जीवित है। हमारे बुजुर्ग कहा करते थे—"जिस घर की रोटी में जीवों का हिस्सा होता है, वहां ईश्वर की कृपा बनी रहती है।"

लेकिन प्रेम और अनुशासन, संवेदना और मर्यादा—दोनों साथ-साथ चलते थे। पशुओं के लिए सम्मान था, पर उनकी मर्यादित भूमिका भी तय थी। रसोई, पूजा-स्थल और रहने के स्थानों की सीमाएं इसलिए थीं कि प्रेम व्यवस्था का विरोधी नहीं, बल्कि उसका पूरक बने। समय बदला। गांव शहर बने, आंगन अपार्टमेंट में बदल गए और जीवन की रफ्तार तेज हो गई। कुत्ता अब केवल चौकीदार नहीं, बल्कि अनेक परिवारों में भावनात्मक साथी बन गया। यह परिवर्तन स्वाभाविक है, लेकिन समस्या तब शुरू होती है जब भावनाएं विवेक पर भारी पड़ने लगती हैं।

आज दिल्ली-एनसीआर, नोएडा, ग्रेटर नोएडा, गाजियाबाद, गुरुग्राम, फरीदाबाद और देश के अनेक शहरों में कुत्तों को लेकर समाज दो ध्रुवों में बंटता दिखाई देता है। एक ओर हर परिस्थिति में कुत्तों का समर्थन करने वाले लोग हैं, दूसरी ओर हर कुत्ते को खतरा मानने वाले लोग। दोनों ही दृष्टिकोण समाधान नहीं, टकराव पैदा करते हैं। "अति सर्वत्र वर्जयेत्।" भारतीय ज्ञान परंपरा का यह सिद्धांत आज पहले से अधिक प्रासंगिक है।

कुत्ते प्रकृति का हिस्सा हैं और उन्हें भी जीवन का अधिकार है। लेकिन यह भी उतना ही सत्य है कि किसी भी लोकतांत्रिक समाज में मनुष्य का जीवन और उसकी सुरक्षा सर्वोच्च प्राथमिकता होती है। यदि

किसी मोहल्ले में आवारा कुत्तों का झुंड बच्चों को स्कूल जाने से रोकने लगे, सुबह टहलने निकले बुजुर्गों पर हमला करने लगे या महिलाओं को भय के वातावरण में जीना पड़े, तो यह केवल पशु-प्रेम का विषय नहीं रह जाता; यह कानून-व्यवस्था और सार्वजनिक सुरक्षा का प्रश्न बन जाता है।

देश के अनेक शहरों में हुई घटनाएं इस चिंता को केवल सैद्धांतिक नहीं रहने देतीं। लखनऊ में वर्ष 2022 में एक पालतू पिटबुल ने अपनी 82 वर्षीय मालकिन पर हमला कर दिया था, जिसमें उनकी मृत्यु हो गई। यह घटना पूरे देश में चर्चा का विषय बनी। इसी प्रकार नोएडा और ग्रेटर नोएडा की कई आवासीय सोसायटियों में पालतू कुत्तों द्वारा बच्चों, घरेलू सहायिकाओं और बुजुर्गों को काटने या घायल करने की घटनाओं के बाद निवासियों और पालतू पशु मालिकों के बीच तीखे विवाद सामने आए। कई मामलों में पुलिस हस्तक्षेप और कानूनी कार्रवाई तक की नौबत आई। दूसरी ओर, आवारा कुत्तों के झुंड द्वारा छोटे बच्चों पर हमलों की घटनाएं उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, तेलंगाना, राजस्थान और मध्य प्रदेश सहित अनेक राज्यों में सामने आ चुकी हैं। कहीं खेलते बच्चों को निशाना बनाया गया, कहीं खेतों या गलियों में अकेले जा रहे लोगों पर झुंड ने हमला किया। ऐसी घटनाएं अपवाद अवश्य हैं, लेकिन इतनी कम भी नहीं कि उन्हें पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया जाए। विडंबना यह है कि जब भी ऐसी कोई घटना होती है, समाज दो हिस्सों में बंट जाता है। एक पक्ष हर शिकायत को पशु-विरोधी मानसिकता बताने लगता है, जबकि दूसरा पक्ष सभी कुत्तों को खतरा घोषित कर देता है। परिणाम यह होता है कि वास्तविक समस्या पीछे छूट जाती है और बहस केवल आरोप-प्रत्यारोप तक सीमित रह जाती है।

हाईराइज सोसायटियों में यह संघर्ष और अधिक दिखाई देता है। कहीं बिना पट्टे के कुत्तों को घुमाया जाता है, कहीं बच्चों के खेल क्षेत्र में उन्हें छोड़ दिया जाता है, कहीं लिफ्ट के उपयोग को लेकर विवाद होता है और कहीं कुत्ते द्वारा काटे जाने के बाद भी मालिक उसे सामान्य घटना बताकर टाल देते हैं। दूसरी ओर कुछ निवासी हर पालतू कुत्ते का विरोध करने लगते हैं। दोनों स्थितियां सामाजिक सौहार्द के लिए घातक हैं।

समाज को यह स्वीकार करना होगा कि अधिकार और उत्तरदायित्व एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यदि किसी व्यक्ति को कुत्ता पालने का अधिकार है तो यह

उसकी जिम्मेदारी भी है कि उसका पालतू किसी दूसरे नागरिक की सुरक्षा, स्वतंत्रता और मानसिक शांति के लिए खतरा न बने। भारतीय लोकजीवन की एक कहावत है—"बाड़ ही खेत खाने लगे तो फसल कौन बचाए?" यदि सुरक्षा का प्रतीक ही भय का कारण बनने लगे, तो नियमों की समीक्षा आवश्यक हो जाती है। जैसे महानगरों में गाय, भैंस और बैलों के लिए अलग व्यवस्था बनाई गई, वैसे ही घनी आबादी वाले क्षेत्रों में पालतू कुत्तों के लिए पंजीकरण, प्रशिक्षण, सार्वजनिक स्थानों पर नियंत्रण, मल-मूत्र प्रबंधन, बीमा, टीकाकरण और मालिक की कानूनी जवाबदेही जैसे नियमों का कठोर पालन होना चाहिए। आवारा कुत्तों की समस्या का समाधान भी भावनात्मक नारों से नहीं निकलेगा। इसके लिए नसबंदी, नियमित टीकाकरण, वैज्ञानिक जनसंख्या नियंत्रण, बेहतर कचरा प्रबंधन, पशु आश्रय केंद्रों का विकास और स्थानीय निकायों की जवाबदेही आवश्यक है। जहां भोजन के अनियोजित स्रोत कम होंगे और वैज्ञानिक प्रबंधन होगा, वहां आवारा कुत्तों की संख्या और आक्रामकता दोनों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

दुर्भाग्य से कुछ स्थानों पर पशु-प्रेम के नाम पर ऐसा दबाव भी बनाया जाता है कि संस्थान, विश्वविद्यालय और सार्वजनिक परिसर व्यवहारिक सीमाओं को भूल जाते हैं। यदि किसी विश्वविद्यालय में कुत्तों को प्रशासनिक भवनों, कक्षाओं या प्रयोगशालाओं तक निर्बाध पहुंच मिल जाए और किसी छात्र, कर्मचारी या आगंतुक की सुरक्षा संबंधी चिंता को असंवेदनशीलता कहकर खारिज कर दिया जाए, तो यह संतुलन नहीं, अतिवाद है। सार्वजनिक संस्थानों का पहला दायित्व सभी नागरिकों के लिए सुरक्षित वातावरण सुनिश्चित करना है। भारतीय दर्शन हमें टकराव नहीं, संतुलन सिखाता है। "जीव दया" हमारी संस्कृति का मूल है, लेकिन "लोक कल्याण" उससे भी व्यापक मूल्य है। जहां दोनों के बीच संतुलन बिगड़ता है, वहीं विवाद जन्म लेते हैं। इसलिए आवश्यकता न कुत्ता-प्रेमी बनने की है और न कुत्ता-विरोधी बनने की। आवश्यकता एक जिम्मेदार समाज बनने की है, जहां पशु-कल्याण और मानव-सुरक्षा दोनों साथ-साथ चलें। किसी भी सभ्य समाज में यह स्वीकार नहीं किया जा सकता कि पशुओं के अधिकारों की रक्षा करते-करते मनुष्य का जीवन असुरक्षित हो जाए, या मानव सुरक्षा के नाम पर पशुओं के प्रति क्रूरता को वैध ठहरा दिया जाए।

अंततः सभ्यता का भविष्य सोशल मीडिया की बहसों या अतिवादी नारों से तय नहीं होगा। वह उन संतुलित निर्णयों से तय होगा, जिनमें एक बच्चे का निर्भय बचपन, एक बुजुर्ग की सुरक्षित सैर, एक महिला का निडर आवागमन, एक जिम्मेदार पालतू पशु मालिक का अनुशासन और एक पशु का सम्मानजनक जीवन—सभी एक साथ सुरक्षित रह सकें। यही भारतीय संस्कृति का सार है। यही आधुनिक शहरी समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता भी। ■

हर छत बने ऊर्जा का स्रोत

लखनऊ देश में लगातार प्रथम, उत्तर प्रदेश के 17 जिले राष्ट्रीय शीर्ष-100 में, और ग्रेटर नोएडा की एक आवासीय सोसायटी बनी भविष्य की ऊर्जा व्यवस्था का मॉडल। यह केवल सरकारी योजना की सफलता नहीं, बल्कि उस भारत की कहानी है जहाँ हर घर की छत एक छोटे बिजलीघर में बदलने की क्षमता रखती है।

एक खबर नहीं, बदलते भारत का संकेत

खबरों में कुछ समाचार ऐसे होते हैं जो एक दिन की सुर्खी बनकर समाप्त नहीं होते; वे आने वाले समय की दिशा निर्धारित करते हैं। उत्तर प्रदेश में रूफटॉप सोलर ऊर्जा से जुड़ी हाल की दो घटनाएँ भी इसी श्रेणी में आती हैं।

पहली घटना यह कि प्रधानमंत्री सूर्य घर: मुफ्त बिजली योजना के अंतर्गत उत्तर प्रदेश ने अभूतपूर्व उपलब्धि हासिल करते हुए देश के शीर्ष 100 जिलों में अपने 17 जिलों को स्थान दिलाया। राजधानी लखनऊ लगातार 1,24,167 रूफटॉप सोलर संयंत्रों के साथ देश का नंबर-1 जिला बना हुआ है, जबकि वाराणसी और कानपुर नगर भी राष्ट्रीय स्तर के शीर्ष 15 जिलों में शामिल हैं।

दूसरी घटना ग्रेटर नोएडा वेस्ट की अरिहंत आर्डेन आवासीय सोसायटी से जुड़ी है, जहाँ 500 किलोवाट क्षमता का ग्रिड-कनेक्टेड रूफटॉप सोलर प्लांट स्थापित कर यह साबित किया गया कि यदि इच्छाशक्ति और तकनीक साथ आएँ, तो बहुमंजिला आवासीय परिसर भी ऊर्जा आत्मनिर्भर बन सकते हैं।

इन दोनों घटनाओं को साथ पढ़ने पर स्पष्ट होता है कि उत्तर प्रदेश केवल सौर ऊर्जा परियोजनाएँ नहीं लगा रहा, बल्कि ऊर्जा उत्पादन के पारंपरिक ढाँचे को बदलने की दिशा में आगे बढ़ रहा है।

ऊर्जा का नया दर्शन:
उपभोक्ता नहीं, उत्पादक बनेगा नागरिक

पिछली शताब्दी तक ऊर्जा उत्पादन कुछ बड़े ताप विद्युत संयंत्रों, जलविद्युत परियोजनाओं और परमाणु बिजलीघरों तक सीमित था। आम नागरिक केवल बिजली का उपभोक्ता था। रूफटॉप सोलर ने इस अवधारणा को बदल दिया है। अब घर, विद्यालय, अस्पताल, उद्योग और आवासीय सोसायटियाँ स्वयं बिजली पैदा कर सकती हैं। नेट-मीटरिंग व्यवस्था के माध्यम से अतिरिक्त बिजली ग्रिड को देकर आर्थिक लाभ भी प्राप्त किया जा सकता है। यह ऊर्जा के लोकतंत्रीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है।

उत्तर प्रदेश क्यों बना देश का अग्रणी राज्य?

उत्तर प्रदेश की सफलता किसी एक योजना का परिणाम नहीं, बल्कि सुनियोजित नीति, प्रशासनिक दक्षता और जनभागीदारी का सम्मिलित प्रभाव है। राज्य सरकार द्वारा जनजागरूकता अभियान, ऑनलाइन आवेदन प्रक्रिया का सरलीकरण,

समयबद्ध स्वीकृतियाँ, डिस्कॉम और संबंधित एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय तथा पारदर्शी सब्सिडी वितरण व्यवस्था ने इस अभियान को गति दी है। परिणामस्वरूप लखनऊ, वाराणसी, कानपुर नगर, बरेली, आगरा, प्रयागराज, मेरठ, सहारनपुर, गोरखपुर सहित 17 जिले राष्ट्रीय रैंकिंग में स्थान बनाने में सफल हुए हैं।

अरिहंत आर्डेन: भविष्य की एक झलक

यदि उत्तर प्रदेश की उपलब्धि का कोई जीवंत उदाहरण देखना हो, तो ग्रेटर नोएडा वेस्ट की अरिहंत आर्डेन सोसायटी उसका सबसे उपयुक्त मॉडल है। एनपीसीएल के सहयोग से स्थापित 500 किलोवाट क्षमता का यह रूफटॉप सोलर प्लांट लगभग 1,519 परिवारों की साझा बिजली आवश्यकताओं को पूरा करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। लिफ्ट, कॉरिडोर, जलापूर्ति पंप, क्लब हाउस और अन्य कॉमन एरिया के लिए स्वच्छ ऊर्जा का उपयोग न केवल बिजली खर्च में उल्लेखनीय कमी लाएगा, बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देगा।

अनुमान है कि यह संयंत्र प्रतिवर्ष 6 से 7.5 लाख यूनिट स्वच्छ बिजली का उत्पादन करेगा, जिससे 40–45 लाख रुपये तक की वार्षिक बचत और 550–650 टन कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन में कमी संभव होगी। यह मॉडल बताता है कि यदि उत्तर प्रदेश की बड़ी आवासीय सोसायटियाँ इसी दिशा में आगे बढ़ें, तो शहरी ऊर्जा प्रबंधन का स्वरूप पूरी तरह बदल सकता है।

सूर्य: भारत की सबसे बड़ी प्राकृतिक पूंजी

भारत को वर्ष में लगभग 250–300 दिन पर्याप्त धूप मिलती है। यह केवल प्राकृतिक सौभाग्य नहीं, बल्कि आर्थिक अवसर भी है। जिस देश पर प्रतिदिन अपार सौर ऊर्जा उपलब्ध होती हो, वहाँ ऊर्जा आत्मनिर्भरता का सबसे व्यावहारिक मार्ग रूफटॉप सोलर ही है। भवन यदि केवल बिजली उपभोग करने के बजाय बिजली उत्पादन भी करें, तो ऊर्जा संकट, वितरण दबाव और पर्यावरणीय चुनौतियों—तीनों का समाधान एक साथ संभव है।

हरित ऊर्जा और आर्थिक समृद्धि का संबंध

रूफटॉप सोलर को केवल पर्यावरणीय पहल मानना इसकी भूमिका को सीमित कर देना होगा। इसका सीधा संबंध अर्थव्यवस्था से भी है। घरेलू बिजली बिलों में कमी, अतिरिक्त बिजली से आय, उद्योगों की ऊर्जा लागत में कमी, स्थानीय रोजगार के नए अवसर, सोलर उपकरण निर्माण और स्थापना सेवाओं का विस्तार—ये सभी मिलकर हरित अर्थव्यवस्था (Green Economy) का आधार तैयार करते हैं। यही कारण है कि विकसित देश स्वच्छ ऊर्जा को आर्थिक प्रतिस्पर्धा का प्रमुख साधन मान रहे हैं।

पंचायत से महानगर तक ऊर्जा लोकतंत्रीकरण

रूफटॉप सोलर का विस्तार केवल शहरों तक सीमित नहीं रहना चाहिए। यदि पंचायत भवन, प्राथमिक विद्यालय, सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र, कृषि मंडियाँ, डेयरी, सिंचाई पंप और सरकारी कार्यालय भी सौर ऊर्जा से जुड़ें, तो ग्रामीण भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं का बड़ा हिस्सा स्थानीय स्तर पर पूरा किया जा सकता है। यही वास्तविक ऊर्जा लोकतंत्रीकरण होगा—जहाँ ऊर्जा कुछ बड़े संयंत्रों की नहीं, बल्कि हर गाँव, हर मोहल्ले और हर नागरिक की साझी शक्ति बने।

अगली चुनौती क्या है?

उत्तर प्रदेश ने प्रभावशाली शुरुआत की है, पर अब अगला चरण और अधिक चुनौतीपूर्ण होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता बढ़ाना, आसान वित्तपोषण, नेट-मीटरिंग को सरल बनाना, तकनीकी रखरखाव की व्यवस्था, स्थानीय स्तर पर प्रशिक्षित तकनीशियनों की उपलब्धता और बहुमंजिला इमारतों के लिए सामुदायिक सौर मॉडल विकसित करना ऐसे क्षेत्र हैं जिन पर निरंतर काम करना होगा। यदि इन चुनौतियों का समाधान समयबद्ध ढंग से किया गया, तो उत्तर प्रदेश केवल रूफटॉप सोलर स्थापना में ही नहीं, बल्कि स्वच्छ ऊर्जा आधारित विकास मॉडल के रूप में भी देश का नेतृत्व कर सकता है।

उत्तर प्रदेश की प्रमुख उपलब्धियाँ

लखनऊ लगातार देश का नंबर-1 जिला (1,24,167 रूफटॉप सोलर संयंत्र)

वाराणसी राष्ट्रीय स्तर पर 10वें स्थान पर

कानपुर नगर 14वें स्थान पर

उत्तर प्रदेश के 17 जिले देश के शीर्ष-100 में

ग्रेटर नोएडा की अरिहंत आर्डेन सोसायटी में 500 किलोवाट क्षमता का रूफटॉप सोलर प्लांट

1,519 परिवारों को प्रत्यक्ष लाभ

प्रतिवर्ष 6–7.5 लाख यूनिट स्वच्छ बिजली उत्पादन की क्षमता

अनुमानित 40–45 लाख रुपये वार्षिक बिजली बचत

लगभग 550–650 टन वार्षिक कार्बन उत्सर्जन में कमी ■

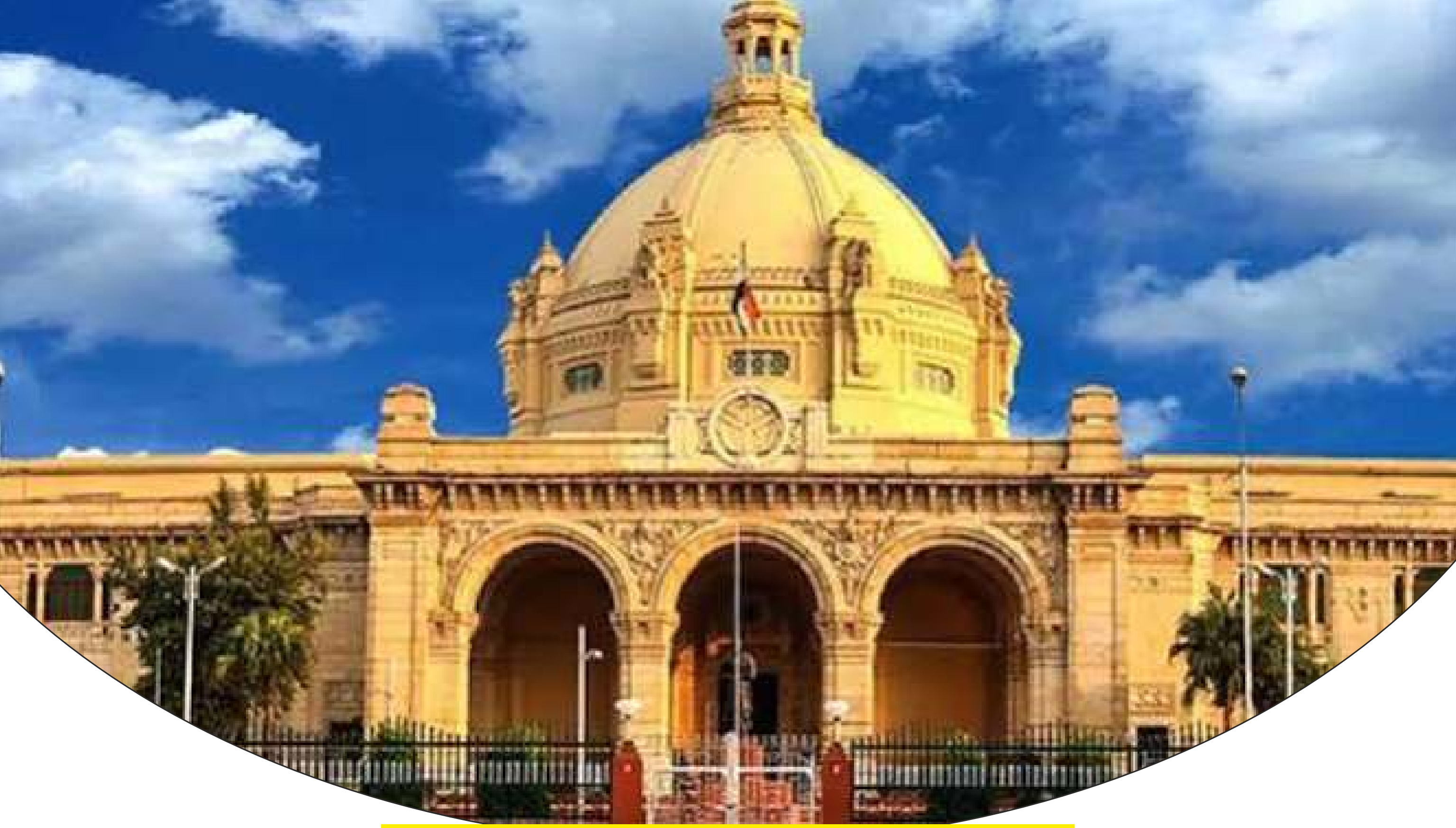

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव 2027

बदलते राजनीतिक समीकरणों के बीच जनादेश की नई तलाश

उत्तर प्रदेश केवल भारत का सबसे बड़ा राज्य नहीं है, बल्कि वह भारतीय लोकतंत्र की राजनीतिक प्रयोगशाला भी है। यहाँ होने वाला प्रत्येक विधानसभा चुनाव केवल सत्ता परिवर्तन का अवसर नहीं होता, बल्कि राष्ट्रीय राजनीति की दिशा और दशा को भी प्रभावित करता है। वर्ष 2027 का विधानसभा चुनाव भी इसी दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा रहा है। इस चुनाव के परिणाम न केवल उत्तर प्रदेश की आगामी विकास यात्रा को प्रभावित करेंगे, बल्कि 2029 के लोकसभा चुनाव की राजनीतिक भूमिका भी तैयार करेंगे। पिछले एक दशक में उत्तर प्रदेश की राजनीति ने उल्लेखनीय परिवर्तन देखा है। जातीय ध्रुवीकरण, धार्मिक विमर्श, सामाजिक न्याय, विकास, कानून-व्यवस्था और कल्याणकारी योजनाएँ—इन सभी ने मिलकर एक नई राजनीतिक संस्कृति का निर्माण किया है। अब प्रश्न केवल यह नहीं रह गया कि कौन-सी पार्टी सत्ता में आएगी, बल्कि यह भी है कि जनता किस प्रकार की राजनीति को अपना समर्थन देगी।

विकास बनाम सामाजिक समीकरण

भाजपा ने पिछले वर्षों में अपनी राजनीति का केंद्र बिंदु विकास, कानून-व्यवस्था, बुनियादी ढाँचे, धार्मिक पर्यटन और कल्याणकारी योजनाओं को बनाया है। एक्सप्रेसवे, मेडिकल कॉलेज, रक्षा गलियारा, नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट, औद्योगिक निवेश, डिजिटल प्रशासन और महिला सुरक्षा जैसे विषय उसकी राजनीतिक रणनीति के प्रमुख आधार हैं। इसके विपरीत समाजवादी पार्टी सामाजिक न्याय, पिछड़े वर्गों की भागीदारी, किसानों, युवाओं, रोजगार और क्षेत्रीय असंतोष को प्रमुख राजनीतिक मुद्दा बनाने का प्रयास कर रही है। बहुजन समाज पार्टी दलित राजनीति के अपने पारंपरिक आधार को पुनर्जीवित करने की चुनौती से जूझ रही है, जबकि कांग्रेस संगठनात्मक पुनर्निर्माण के माध्यम से अपनी प्रासंगिकता स्थापित करने का प्रयास कर रही है।

जातीय राजनीति का बदलता स्वरूप

उत्तर प्रदेश की राजनीति में जाति आज भी महत्वपूर्ण कारक है, किन्तु उसका स्वरूप पहले जैसा नहीं रहा। मतदाता अब केवल जातीय पहचान के आधार पर मतदान नहीं करता। विकास, स्थानीय नेतृत्व, शासन की गुणवत्ता, रोजगार, शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा भी निर्णायक भूमिका निभा रहे हैं। युवाओं की नई पीढ़ी डिजिटल माध्यमों से राजनीतिक जानकारी प्राप्त कर रही है। यह वर्ग घोषणाओं से अधिक परिणामों का मूल्यांकन करता है। यही कारण है कि राजनीतिक दल अब केवल जातीय समीकरणों पर निर्भर नहीं रह सकते।

महिला मतदाता : नई निर्णायक शक्ति

उत्तर प्रदेश की चुनावी राजनीति में महिला मतदाता तेजी से प्रभावशाली बनी हैं। उज्ज्वला योजना, आवास, शौचालय, राशन, स्वास्थ्य सेवाएँ, महिला सुरक्षा और स्वयं सहायता समूहों ने महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को नई दिशा दी है। दूसरी ओर शिक्षा, रोजगार, महँगाई और स्वास्थ्य सुविधाएँ भी उनके लिए महत्वपूर्ण चुनावी विषय हैं। जो दल महिला मतदाताओं के विश्वास को सबसे प्रभावी ढंग से अर्जित करेगा, उसे चुनावी लाभ मिलने की संभावना अधिक रहेगी।

युवाओं की अपेक्षाएँ

उत्तर प्रदेश देश का सबसे युवा राज्य है। रोजगार, प्रतियोगी परीक्षाओं की पारदर्शिता, कौशल विकास, स्टार्टअप, उद्योग और डिजिटल अर्थव्यवस्था युवाओं के प्रमुख मुद्दे हैं। राजनीतिक दलों के लिए यह वर्ग सबसे बड़ी चुनौती भी है और सबसे बड़ा अवसर भी। युवा मतदाता अब केवल राजनीतिक नारों से संतुष्ट नहीं होता। वह अवसर, पारदर्शिता और भविष्य की स्पष्ट नीति चाहता है।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश की राजनीतिक भूमिका

पश्चिमी उत्तर प्रदेश, विशेषकर गौतम बुद्ध नगर, नोएडा, ग्रेटर नोएडा, गाजियाबाद, मेरठ, बुलंदशहर, बागपत और आसपास का क्षेत्र आज प्रदेश की आर्थिक शक्ति का प्रमुख केंद्र बन चुका है। यहाँ औद्योगिक निवेश, शहरीकरण, भूमि अधिग्रहण, किसान मुआवजा, ट्रैफिक, प्रदूषण, आवास, रोजगार और आधारभूत संरचना चुनावी विमर्श को प्रभावित करेंगे। इस क्षेत्र में विकास के साथ-साथ स्थानीय असंतोष के मुद्दे भी राजनीतिक दलों की परीक्षा लेंगे।

सोशल मीडिया की बढ़ती भूमिका

वर्ष 2027 का चुनाव संभवतः उत्तर प्रदेश का अब

तक का सबसे अधिक डिजिटल चुनाव होगा। सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्रचार, लघु वीडियो, डेटा विश्लेषण और डिजिटल अभियान चुनावी रणनीति का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं। इसके साथ ही फर्जी सूचनाओं, भ्रामक प्रचार और डिजिटल नैरेटिव की चुनौती भी उतनी ही गंभीर होगी। मतदाताओं के लिए तथ्य और प्रचार के बीच अंतर समझना पहले से अधिक आवश्यक होगा।

विपक्ष की सबसे बड़ी चुनौती

विपक्ष के सामने सबसे बड़ा प्रश्न केवल सरकार की आलोचना करना नहीं है, बल्कि एक विश्वसनीय वैकल्पिक दृष्टि प्रस्तुत करना है। मतदाता अब नकारात्मक राजनीति से अधिक सकारात्मक और व्यावहारिक समाधान चाहता है। यदि विपक्ष साझा रणनीति, प्रभावी नेतृत्व और स्पष्ट कार्यक्रम प्रस्तुत करने में सफल होता है, तो चुनाव अधिक प्रतिस्पर्धी हो सकता है।

सत्तापक्ष की चुनौती

सत्ता विरोधी भावना (Anti-Incumbency) प्रत्येक लोकतंत्र का स्वाभाविक तत्व होती है। भाजपा के सामने चुनौती होगी कि वह विकास कार्यों, सुशासन और संगठनात्मक क्षमता के आधार पर मतदाताओं का विश्वास पुनः अर्जित करे। बड़े प्रकल्पों की सफलता के साथ-साथ स्थानीय समस्याओं का समाधान भी उतना ही महत्वपूर्ण होगा।

लोकतंत्र की वास्तविक कसौटी

लोकतंत्र में चुनाव केवल राजनीतिक दलों की परीक्षा नहीं होते, बल्कि मतदाताओं की लोकतांत्रिक परिपक्वता की भी परीक्षा होते हैं। उत्तर प्रदेश का मतदाता अब पहले की अपेक्षा अधिक जागरूक, सूचनासंपन्न और अपेक्षाकृत अधिक विवेकपूर्ण होता दिखाई देता है। यही परिवर्तन भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी शक्ति है।

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव 2027 केवल सत्ता परिवर्तन का चुनाव नहीं होगा; यह विकास, सामाजिक न्याय, सुशासन, रोजगार, निवेश, किसान हित, महिला सशक्तीकरण और युवाओं की आकांक्षाओं के बीच संतुलन स्थापित करने की लोकतांत्रिक प्रक्रिया होगी। राजनीतिक दलों के लिए यह अवसर है कि वे भावनात्मक ध्रुवीकरण से आगे बढ़कर नीति, प्रदर्शन और जनविश्वास पर आधारित राजनीति प्रस्तुत करें। वहीं मतदाताओं के लिए यह समय है कि वे दलों के वादों की बजाय उनके कार्यों, दृष्टि और विश्वसनीयता का मूल्यांकन करें। अंततः लोकतंत्र की वास्तविक शक्ति किसी एक दल की विजय में नहीं, बल्कि जनता के विवेकपूर्ण निर्णय में निहित होती है। उत्तर प्रदेश 2027 का चुनाव इसी लोकतांत्रिक परिपक्वता की अग्निपरीक्षा होगा। ■

अंत भला तो सब भला : जंतर-मंतर से उठे आंदोलन ने भारत को क्या सिखाया?

आंदोलन केवल मांगों की सूची नहीं होते, वे समाज के चरित्र का दर्पण भी होते हैं। जब आंदोलन समाप्त होता है, तब केवल परिणाम नहीं, बल्कि उसकी पूरी यात्रा इतिहास के न्यायालय में खड़ी होती है।

नीट पेपर लीक प्रकरण को लेकर जंतर-मंतर पर चला छात्र आंदोलन अंततः समाप्त हो गया। शिक्षा मंत्री के पद छोड़ने, आंदोलन की समाप्ति, अमरण अनशन के समापन और अनेक राजनीतिक घटनाक्रमों के बाद यह प्रकरण फिलहाल अपने निष्कर्ष तक पहुंचा। पहली दृष्टि में इसे छात्रों की जीत या सरकार की हार अथवा समझौते की सफलता के रूप में देखा जा सकता है। किंतु किसी भी लोकतांत्रिक आंदोलन का मूल्यांकन केवल उसके अंतिम परिणाम से नहीं, बल्कि उसके पूरे आचरण, भाषा, नैतिकता, नेतृत्व और समाज पर पड़े प्रभाव से किया जाना चाहिए। यही कारण है कि इस पूरे घटनाक्रम पर भारतीय लोकजीवन की प्रसिद्ध उक्ति "अंत भला तो सब भला" सहज ही स्मरण हो आती है। यदि अंततः समाधान निकल आया, तो यह लोकतंत्र के लिए शुभ संकेत है; किंतु यह भी उतना ही आवश्यक है कि उस समाधान तक पहुंचने के दौरान लोकतांत्रिक मर्यादाओं को कितना बचाया गया और कितना खो दिया गया।

भारतीय लोकतंत्र का इतिहास बताता है कि आंदोलन केवल विरोध का माध्यम नहीं रहे, बल्कि नैतिक शक्ति के प्रतीक भी रहे हैं। महात्मा गांधी ने सत्याग्रह को आत्मबल का शस्त्र बनाया था। उनका विश्वास था कि विरोध जितना प्रखर हो, उसकी भाषा उतनी ही संयमित होनी चाहिए। विरोधी को पराजित नहीं, परिवर्तित करना ही सत्याग्रह का उद्देश्य था। इसी परंपरा में जयप्रकाश नारायण का आंदोलन, अन्ना हज़ारे का जनलोकपाल आंदोलन और अनेक छात्र आंदोलनों ने अपनी-अपनी छाप छोड़ी। मतभेद तीखे थे, लेकिन सार्वजनिक जीवन की एक मर्यादा बनी रहती थी। जंतर-मंतर का यह आंदोलन अनेक दृष्टियों से अलग दिखाई दिया। इसमें बड़ी संख्या में छात्रों ने भाग लिया। युवाओं की पीड़ा वास्तविक थी, क्योंकि परीक्षा प्रणाली में विश्वास डगमगाने का अर्थ केवल एक परीक्षा का संकट नहीं, बल्कि लाखों परिवारों के सपनों का संकट है। इस दृष्टि से छात्रों का आक्रोश स्वाभाविक था। आंदोलन के दौरान सामाजिक कार्यकर्ता सोनम वांगचूक का अमरण अनशन नैतिक दबाव का एक महत्वपूर्ण प्रतीक बनकर सामने आया। अनशन भारतीय लोकतंत्र की उस परंपरा का हिस्सा है जिसमें शरीर कष्ट सहता है, लेकिन प्रतिद्वंद्वी के प्रति घृणा नहीं पालता। अंततः

उनका अनशन समाप्त हुआ, जिसने यह संकेत दिया कि संवाद के लिए अभी भी लोकतंत्र के द्वार बंद नहीं हुए हैं। दूसरी ओर, आंदोलन में राजनीतिक दलों की सक्रिय भागीदारी ने अनेक प्रश्न भी खड़े किए। लोकतंत्र में विपक्ष का समर्थन स्वाभाविक और आवश्यक है, किंतु जब किसी छात्र आंदोलन का नेतृत्व राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का मंच बनने लगे, तब उसके मूल उद्देश्य पर स्वाभाविक रूप से बहस शुरू हो जाती है। इतिहास गवाह है कि जनभावनाओं के साथ राजनीति का मेल कभी-कभी परिवर्तन का माध्यम बनता है, तो कभी आंदोलन की मूल आत्मा को भी धूमिल कर देता है। इस आंदोलन का सबसे चिंताजनक पक्ष सार्वजनिक भाषा का स्तर रहा। लोकतंत्र में असहमति आवश्यक है, लेकिन असभ्यता और गाली-गलोच कभी स्वीकार्य नही होती कभी आवश्यक नहीं होती। विचारों का संघर्ष यदि व्यक्तित्व पर आक्रमण में बदल जाए, तो लोकतंत्र का सौंदर्य कम होने लगता है। इस आंदोलन में अनेक अवसर ऐसे आए जब मंचों से, नारों में और सोशल मीडिया पर भाषा की मर्यादा टूटती हुई दिखाई दी। दुःखद यह भी रहा कि इस कटुता की प्रतिस्पर्धा में केवल पुरुष ही नहीं, बल्कि अनेक युवा छात्राएँ भी उसी तीखे तेवर के साथ दिखाई दीं। यह किसी एक वर्ग की आलोचना का विषय नहीं, बल्कि पूरे समाज के लिए आत्मचिंतन का अवसर है। भारतीय संस्कृति ने सदैव कहा है—"वाणी में मधुरता, विचार में दृढ़ता और व्यवहार में विनम्रता"। यदि भाषा ही कटु हो जाए तो सबसे श्रेष्ठ उद्देश्य भी विवाद का विषय बन जाता है। सोशल मीडिया ने भी इस आंदोलन को नई दिशा दी। सूचनाएँ तेज़ी से फैलीं, समर्थन मिला, लेकिन अफवाहें, भावनात्मक उत्तेजना और त्वरित प्रतिक्रियाएँ भी उतनी ही तीव्र रहीं। आज आंदोलन केवल सड़कों पर नहीं, मोबाइल स्क्रीन पर भी लड़े जाते हैं। इसलिए संयम की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। लोकतंत्र की सबसे बड़ी शक्ति संवाद है। संसद, सड़क और समाज—तीनों का अपना-अपना स्थान है। यदि सड़क संसद का स्थान लेने लगे या संसद सड़क की भाषा बोलने लगे, तो लोकतांत्रिक संतुलन कमजोर होने लगता है। स्वस्थ लोकतंत्र में संघर्ष और संवाद दोनों समान रूप से आवश्यक हैं।

इस पूरे घटनाक्रम ने एक गंभीर प्रश्न भी छोड़ा है—क्या भारत में गांधीवादी आंदोलन की शैली धीरे-धीरे पीछे छूट रही है? इसका उत्तर सरल नहीं है। सत्याग्रह की भावना समाप्त नहीं हुई है, किंतु उसकी अभिव्यक्ति बदल गई है। आज का युवा अधिक मुखर है, अधिक त्वरित है और डिजिटल माध्यमों से कहीं अधिक प्रभावशाली भी। परंतु जितनी तेज़ उसकी आवाज़ हुई है, उतनी ही अधिक जिम्मेदारी उसकी भाषा पर भी आ गई है। पुरानी कहावत है—"बोली एक अनमोल है, जो कोई बोले जान; हिये तराजू तौलि के, तब मुख बाहर आन।" कबीर की यह सीख आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी पाँच सौ वर्ष पहले थी। लोकतंत्र में सरकारें आती-जाती हैं, मंत्री बदलते हैं, आंदोलन उठते और समाप्त होते हैं; किंतु राष्ट्र का लोकतांत्रिक संस्कार स्थायी होता है। यदि हम उस संस्कार को कमजोर कर देंगे, तो किसी भी आंदोलन की सफलता अधूरी रह जाएगी। अंततः यदि इस पूरे घटनाक्रम से कोई सबसे बड़ा संदेश निकलता है तो वह यही है कि संघर्ष आवश्यक है, प्रश्न पूछना आवश्यक है, जवाबदेही आवश्यक है; लेकिन इन सबके बीच शालीनता, संवाद, संवेदनशीलता और लोकतांत्रिक मर्यादा भी उतनी ही आवश्यक है। "आग से आग नहीं बुझती, जल से बुझती है"—यह भारतीय सभ्यता का शाश्वत संदेश है। इसलिए इस आंदोलन का अंतिम मूल्यांकन केवल इस आधार पर नहीं होना चाहिए कि कौन जीता और कौन हारा, बल्कि इस आधार पर होना चाहिए कि लोकतंत्र ने इससे क्या सीखा। यदि इस आंदोलन के परिणामस्वरूप परीक्षा व्यवस्था अधिक पारदर्शी बने, जवाबदेही मजबूत हो, युवाओं का विश्वास लौटे, राजनीतिक दल जनहित को दलहित से ऊपर रखें और भविष्य के आंदोलनों में भाषा तथा व्यवहार की मर्यादा पुनः स्थापित हो सके—तभी वास्तव में कहा जा सकेगा—

"अंत भला तो सब भला।"

परंतु यदि हमने इन अनुभवों से कोई सीख नहीं ली, तो इतिहास फिर वही प्रश्न पूछेगा कि क्या हमने केवल एक आंदोलन समाप्त किया, या लोकतांत्रिक संस्कृति को भी थोड़ा और कमजोर कर दिया? लोकतंत्र की वास्तविक विजय किसी पक्ष की हार या जीत में नहीं, बल्कि उस विश्वास में होती है कि असहमति के बावजूद समाज साथ चल सकता है। यही भारत की सबसे बड़ी शक्ति है और यही उसकी सबसे बड़ी आशा भी। ■

वैश्विक भू-राजनीतिक तनाव और उसका भारत पर प्रभाव

इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक में विश्व एक ऐसे संक्रमणकाल से गुजर रहा है, जहाँ शक्ति, सुरक्षा और समृद्धि की पारंपरिक परिभाषाएँ तेजी से बदल रही हैं। कभी विश्व राजनीति का केंद्र केवल सैन्य शक्ति और भौगोलिक सीमाएँ हुआ करती थीं, किंतु आज ऊर्जा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), सेमीकंडक्टर, दुर्लभ खनिज, डेटा, साइबर सुरक्षा, समुद्री व्यापार मार्ग, जलवायु परिवर्तन और आपूर्ति शृंखलाएँ (Supply Chains) वैश्विक शक्ति-संतुलन के निर्णायक कारक बन चुके हैं।

दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में जारी युद्ध, महाशक्तियों के बीच बढ़ती प्रतिस्पर्धा, आर्थिक प्रतिबंध, तकनीकी वर्चस्व की होड़ और क्षेत्रीय संघर्षों ने एक ऐसी वैश्विक अनिश्चितता को जन्म दिया है, जिसका प्रभाव प्रत्येक देश के नागरिक तक पहुँच रहा है। महँगाई, ऊर्जा संकट, खाद्यान्न सुरक्षा, रोजगार, निवेश और व्यापार—ये सभी अब केवल घरेलू नीतियों के विषय नहीं रह गए हैं, बल्कि वैश्विक भू-राजनीति से गहरे जुड़े हुए हैं।

भारतीय लोकजीवन में एक कहावत है—"दूर की आग भी हवा के सहारे घर तक पहुँच जाती है।" आज वैश्विक तनाव भी उसी दूर की आग की तरह हैं। वे हजारों किलोमीटर दूर भले उत्पन्न हों, लेकिन उनका प्रभाव भारत के किसान, व्यापारी, उद्योगपति, विद्यार्थी और सामान्य उपभोक्ता तक अवश्य पहुँचता है।

इसी संदर्भ में भारत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। विश्व आज भारत को केवल एक विशाल जनसंख्या वाले देश के रूप में नहीं, बल्कि एक उभरती हुई आर्थिक, रणनीतिक और नैतिक शक्ति के रूप में देख रहा है।

भू-राजनीति का बदलता अर्थ

'भू-राजनीति' (Geopolitics) का पारंपरिक अर्थ था—भौगोलिक स्थिति के आधार पर देशों के बीच शक्ति-संतुलन। किंतु आज इसका स्वरूप अत्यंत व्यापक हो चुका है। आज यदि किसी देश के पास ऊर्जा संसाधनों पर नियंत्रण है, अत्याधुनिक तकनीक है, मजबूत डिजिटल अवसंरचना है, वैश्विक व्यापार मार्गों तक पहुँच है और विश्वसनीय कूटनीति है, तो वही वास्तविक शक्ति का केंद्र बन जाता है। इसलिए आज युद्ध केवल सीमाओं पर नहीं लड़े जाते; वे प्रयोगशालाओं, बंदरगाहों, डेटा केंद्रों, चिप निर्माण संयंत्रों, समुद्री मार्गों और वित्तीय संस्थानों में भी लड़े जा रहे हैं। एक पुरानी कहावत है—"जिसके हाथ में चाबी होती है, ताला उसी की मर्जी से खुलता है।" आधुनिक विश्व में यह "चाबी" तकनीक, ऊर्जा और वैश्विक आपूर्ति शृंखलाएँ हैं।

वैश्विक तनाव के प्रमुख स्रोत

आज विश्व के सामने अनेक समानांतर संकट हैं जैसे, महाशक्तियों के बीच बढ़ती रणनीतिक प्रतिस्पर्धा,

पश्चिम एशिया में अस्थिरता और ऊर्जा आपूर्ति की अनिश्चितता, हिंद-प्रशांत क्षेत्र में समुद्री प्रभुत्व की प्रतिस्पर्धा, साइबर युद्ध और कृत्रिम बुद्धिमत्ता का सैन्य उपयोग, जलवायु परिवर्तन और जल संसाधनों पर बढ़ता दबाव, खाद्यान्न सुरक्षा और उर्वरक आपूर्ति की चुनौतियाँ, दुर्लभ खनिजों तथा सेमीकंडक्टर उद्योग पर नियंत्रण की होड़।

ये सभी संकट अलग-अलग दिखाई देते हैं, लेकिन वास्तव में एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

भारत पर आर्थिक प्रभाव

भारत विश्व की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है। उसकी ऊर्जा आवश्यकताओं का बड़ा भाग आयात पर निर्भर है। यदि तेल और गैस की कीमतें बढ़ती हैं, तो उसका प्रभाव परिवहन, कृषि, उद्योग, बिजली उत्पादन और उपभोक्ता वस्तुओं की लागत पर पड़ता है। यही कारण है कि किसी दूरस्थ क्षेत्र का संघर्ष भारतीय परिवार के मासिक बजट तक को प्रभावित कर सकता है। जब कुएँ का पानी कम होता है, तो पूरे गाँव को उसकी चिंता होती है।" आज वैश्विक ऊर्जा बाजार वही साझा कुआँ बन चुका है।

तकनीक की नई राजनीति

भविष्य की शक्ति केवल सैनिकों की संख्या से नहीं, बल्कि चिप, डेटा और एल्गोरिद्म से निर्धारित होगी। सेमीकंडक्टर, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, क्वांटम कंप्यूटिंग, 5G/6G संचार और साइबर सुरक्षा आने वाले दशकों की रणनीतिक संपत्ति हैं। यदि भारत इन क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बनता है, तो वह केवल आर्थिक महाशक्ति ही नहीं, बल्कि तकनीकी महाशक्ति भी बन सकता है।

भारत की विदेश नीति : संतुलन की कला

भारतीय विदेश नीति की सबसे बड़ी विशेषता उसका संतुलन है। भारत ने विभिन्न वैश्विक शक्तियों के साथ अपने संबंधों को इस प्रकार विकसित किया है कि वह किसी एक ध्रुव पर पूरी तरह निर्भर न हो। यह नीति भारतीय परंपरा के उस सिद्धांत की याद दिलाती है— "न अधिक झुको, न अधिक अकड़ो; संतुलन ही स्थिरता का आधार है।" यही संतुलन भारत को विश्व मंच पर एक विश्वसनीय साझेदार बनाता है।

रक्षा और राष्ट्रीय सुरक्षा

आधुनिक युद्ध बहुआयामी हो चुके हैं। सीमा सुरक्षा के साथ-साथ साइबर सुरक्षा, अंतरिक्ष सुरक्षा, समुद्री सुरक्षा और ऊर्जा सुरक्षा भी राष्ट्रीय सुरक्षा के अनिवार्य अंग हैं। भारत को रक्षा उत्पादन में

आत्मनिर्भरता बढ़ानी होगी ताकि संकट की स्थिति में बाहरी निर्भरता न्यूनतम रहे।

उत्तर प्रदेश और गौतम बुद्ध नगर : वैश्विक राजनीति का स्थानीय प्रभाव

कई लोगों को लगता है कि वैश्विक राजनीति केवल राजधानी या विदेश मंत्रालय तक सीमित विषय है, लेकिन यह धारणा अब बदल चुकी है। गौतम बुद्ध नगर आज भारत के सबसे बड़े औद्योगिक, इलेक्ट्रॉनिक्स, डेटा सेंटर, मोबाइल निर्माण और लॉजिस्टिक्स केंद्रों में से एक है। नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट, यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास क्षेत्र, इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण, वेयरहाउसिंग और वैश्विक निवेश ने इस जिले को विश्व अर्थव्यवस्था से सीधे जोड़ दिया है। यदि विश्व व्यापार में मंदी आती है, तो यहाँ निवेश प्रभावित होता है। यदि वैश्विक कंपनियाँ चीन से बाहर नए उत्पादन केंद्र खोजती हैं, तो सबसे पहले लाभ नोएडा और ग्रेटर नोएडा जैसे क्षेत्रों को मिल सकता है।

इस प्रकार वैश्विक भू-राजनीति अब स्थानीय रोजगार, उद्योग, भूमि, शिक्षा और शहरी विकास से सीधे जुड़ चुकी है।

भारत के सामने अवसर

हर संकट अपने भीतर अवसर लेकर आता है। भारतीय कहावत है— "जहाँ चाह, वहाँ राह।" भारत के पास युवा जनसंख्या, विशाल बाजार, लोकतांत्रिक व्यवस्था, वैज्ञानिक क्षमता और उद्यमशील समाज है। यदि नीति, शिक्षा, अनुसंधान और नवाचार में निरंतर निवेश किया जाए, तो भारत वैश्विक विनिर्माण, हरित ऊर्जा, रक्षा उत्पादन, अंतरिक्ष तकनीक और डिजिटल अर्थव्यवस्था में अग्रणी भूमिका निभा सकता है।

भारत की रणनीति कैसी हो?

भारत को पाँच प्रमुख क्षेत्रों पर दीर्घकालिक ध्यान देना होगा। इनमें ऊर्जा आत्मनिर्भरता, तकनीकी अनुसंधान और नवाचार, रक्षा उत्पादन और साइबर सुरक्षा, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा एवं कौशल विकास और मजबूत और संतुलित कूटनीति शामिल हैं। यह पाँच स्तंभ भारत को वैश्विक अनिश्चितताओं के बीच स्थिरता प्रदान करेंगे।

विश्व व्यवस्था में भारत का समय

इतिहास में ऐसे अवसर बार-बार नहीं आते जब कोई राष्ट्र स्वयं को नई विश्व व्यवस्था के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाने की स्थिति में पाए। भारत आज उसी मोड़ पर खड़ा है। कबीर का प्रसिद्ध दोहा है—

«धीरे-धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय।
माली सींचे सौ घड़ा, ऋतु आए फल होय।।»

राष्ट्र निर्माण भी इसी सिद्धांत पर चलता है। तात्कालिक प्रतिक्रियाओं से नहीं, बल्कि दूरदर्शी नीतियों, सतत निवेश, ज्ञान, नवाचार और सामाजिक एकता से दीर्घकालिक शक्ति का निर्माण होता है। अंततः वैश्विक भू-राजनीतिक तनाव भारत के लिए केवल संकट नहीं हैं। वे एक ऐसी परीक्षा हैं, जिसमें सफलता का अर्थ होगा—एक आत्मनिर्भर, तकनीकी रूप से सक्षम, आर्थिक रूप से सुदृढ़ और नैतिक रूप से विश्वसनीय भारत का उदय। यदि भारत अपनी लोकतांत्रिक शक्ति, युवा ऊर्जा, वैज्ञानिक क्षमता और संतुलित कूटनीति को एक सूत्र में पिरो सके, तो आने वाला दशक केवल "भारत का दशक" नहीं, बल्कि "भारत के नेतृत्व वाला वैश्विक सहयोग का दशक" भी सिद्ध हो सकता है। "समय की धारा उसी का साथ देती है जो परिस्थितियों को समझकर दिशा तय करता है।" आज भारत के सामने वही ऐतिहासिक अवसर है—संकटों को अवसर में बदलने का, और विश्व मंच पर एक जिम्मेदार, विश्वसनीय तथा दूरदर्शी नेतृत्व प्रस्तुत करने का। ■

ईश्वर से ये कैसी आसक्ति

हिंदुओं के लिए मूर्ति तभी पूजनीय है जब उसमें देवता की आध्यात्मिक ऊर्जा समाहित हो। मूर्ति पूजा की प्रथा वैदिक काल से चली आ रही है। अगर हम पुराने समय की बात करें तो मूर्तियां पत्थर धातु या फिर लकड़ी से बनाई जाती थीं। बाद में मिट्टी और धीरे-धीरे प्लास्टर ऑफ पेरिस की मूर्तियां बाजार में आ गई। गांव कस्बे में हमारे बचपन में हम लोग बामी की मिट्टी से शिवलिंग अथवा अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियां बनाया करते थे,और उनको पूजा अर्चना के बाद किसी साफ नदी में बहा दिया करते थे। अभी भी हिंदू धर्म में दिवाली के समय लक्ष्मी गणेश की पूजा नई मूर्तियां लाई जाती है और पुरानी मूर्तियों को नदी या किसी अन्य जल स्रोत में विसर्जित कर दिया जाता है। लेकिन जैसा कि हम जानते हैं बड़े शहरों जैसे दिल्ली-एनसीआर में ज्यादा जल स्रोत न होने के कारण हमें पूजा की सामग्री एवं मूर्तियों को विसर्जित करने के लिए किसी दूसरे स्थान पर जाना पड़ता है जहां नदी या कोई जल स्रोत हो। लेकिन शहरों की तेज भाग -दौड़ और युवा पीढ़ी के पास समय न होने के कारण हम इन मूर्तियों को किसी पीपल के पेड़ के नीचे,किसी दीवार पर या अन्य किसी भी कोने वाले स्थान पर रख देते हैं या अपने घर पर काम करने वाली सहायिका को पकड़ा देते हैं। त्योहारों के बाद पेड़ों के नीचे पड़ी हुई पूजा सामग्री एवं मूर्तियों को देखकर बहुत ही आश्चर्य होता है कि जिनकी हमने साल भर पूजा की उनको ही कचरे में फेंक दिया। यह मनुष्यों द्वारा किया हुआ भगवान का बहुत ही बड़ा अनादर लगता है। ईलीट होम्स एवं आसपास की सोसाइटी में पूजा सामग्री और भगवान के वस्त्र आदि की विधिवत रीसाइक्लिंग के लिए डोनेशन ड्राइव की गई। जिसमें मूर्तियों को अलग-अलग तरीके से रीसायकल किया जा जाता है जैसे मिट्टी की मूर्तियों को पानी में ही गला दिया जाता है और उसको किसी बगीचे में डाल दिया जाता है , दूसरा जो मूर्तियां पी. ओ.पी.की बनी होती हैं उनको तोड़ कर करके उनसे गमले या पशु पक्षियों को पानी रखने के लिए छोटे बर्तन बनाए जाते हैं और भगवान के कपड़ों को आगे रीसाइकलिंग के लिए पानीपत भेजा जाता है। उनसे नए कपड़े तैयार किए जाते हैं ।इसी संदर्भ में मैंने और वैशाली जी ने सेक्टर 77 में पेड़ों के नीचे से करीब 100 मूर्तियां सम्मान पूर्वक इकट्ठी की और उनको रीसाइकलिंग के लिए भेज दिया। क्या ये स्थाई समाधान है? अगर हम स्थाई समाधान (सस्टेनेबिलिटी)की बात करें तो हम अपने तरीके बदल कर देख सकते हैं,और हर साल नई मूर्तियां लाने के जगह पर चांदी या अन्य धातु की मूर्तियां रख कर उसे ही हर साल गंगाजल से साफ करके फिर से पूजा में रख सकते हैं,इस से काफी हद तक हम मूर्तियों को इधर-उधर फेंकना कम किया जा सकता हैं। कई स्थानों पर गाय के गोबर से बनी हुई इको फ्रेंडली मूर्तियां भी चलन में आ गई हैं जिनको घर पर ही विसर्जित करना आसान हो गया है। अगर हम इस विषय को गंभीरता से सोचें तो हम अपने धर्म की रक्षा के साथ-साथ अपने धर्म की इज्जत भी करेंगे और आने वाली पीढ़ी को भी अच्छी शिक्षा दे सकेंगे।

By Dr Madhu Lata
(Botanist Limnologist and Biodiversity Expert)

यूं घणा इतरावे मत

दिन सदा एक से रहवंगे
यूं तू जाणे मत
सुवाद थोड़ा दाल-भात का भी रख ले
बान थोड़ी रोटी चटनी की भी चख ले
बासन हैं घर के
थोड़ा मान रख
अगर खणक रहे
तो तू भी मूँछों पे ताव रख
कौड़ी भर ले
ये भी तेरे हैं
बघेर मत परसो मेरे हैं
बुरा बन
पर बदनाम ना होवे
लाठी डंडो ते कदी नाम ना होवे
माणस हैं
तेरी बुग्गी के झोटे नहीं
कर याद उनकु भी
जो कदी सत्ता में फेर लौटे नहीं
कदी घणा जान रा हो
यूं इतरावे मत
#अहिंसा परमो धर्मः

#Ch.Vikrant Singh Nagar

सवाल आस्था का नहीं

सवाल आस्था का नहीं
बवाल का सवाल है
जो हो रहा जंतर-मंतर पर
देश विदेश में उसकी क्या मिसाल है

ना काबिल तुम हो
एक पेपर का ही तो सवाल है
मैं तुमसे क्या ही पूछ लू
मेरी ऐसी कहाँ मजाल है

तुम तो बड़े हिम्मत वाले थे
तुम कहाँ थकने वाले थे
पर अब तो इसपे ही सवाल है

बरपा क्यूँ है बवाल
ये ही तो सीधा सवाल है
चिंता मत करो
हैं कुछ लोग
जिनके हाथ में अभी भी मशाल है

#Ch.Vikrant Singh Nagar

जंतर-मंतर

क्या हुआ जंतर-मंतर
क्या बच्चे कुछ मांग रहे हैं
बच्चों को चाहिए त्यागपत्र इस देश के शिक्षा मंत्री का
गृहमंत्री का और लगे हाथ प्रधानमंत्री का
त्यागपत्र लेकर क्या होगा
क्या बच्चों के पास कोई अच्छा शिक्षा मंत्री है
अच्छा गृहमंत्री और प्रधानमंत्री है
मंत्रियों के बदलने से बदल सकता है भाग्य और भविष्य
तो बदल सकता था देश भी
देश नहीं बदलता
देश बदलना भी नहीं चाहिए
देश सुधरना चाहिए
सुधरने का एक है रास्ता
बदलें नेता
क्या यह हो सकता है?
तो फिर क्यों बदलना चाहते हैं एक मंत्री को
जबकि बदले में मिलने वाले मंत्री का पता नहीं कैसा होगा
होगा वह विद्वान पढ़ा लिखा
या होगा अनपढ़ अशिक्षित और असभ्य भी
तय कर लो बदले में चाहिए क्या तुम्हें
मंत्री के बदले एक और मंत्री या
मंत्री के बदले अभिभावक, अच्छा प्रबंधक और संवेदनशील नेता?
मांगो जिससे भला हो मेरा, तुम्हारा, इस देश का
मत मांगो जिससे भला हो किसी और ऐसे नेता का जो बनना चाहता हो केवल मंत्री

-राजेश बैरागी-

रवि कुमार एन जी, मुख्य कार्यपालक अधिकारी,
ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण

राकेश कुमार सिंह, मुख्य कार्यपालक अधिकारी,
यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण

अजय कुमार, एडिशनल पुलिस कमिश्नर गौतम बुध नगर

मेधा रूपम, जिलाधिकारी गौतम बुद्ध नागर

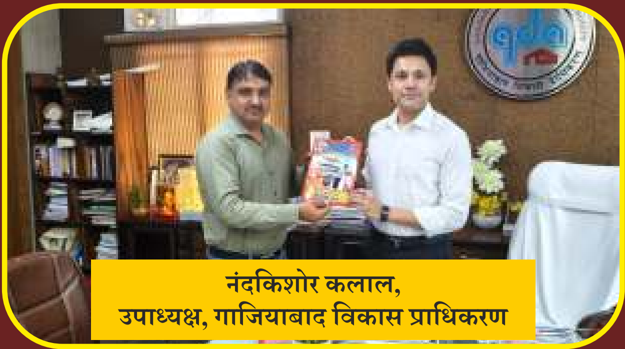

नंदकिशोर कलाल,
उपाध्यक्ष, गाजियाबाद विकास प्राधिकरण

सौम्य श्रीवास्तव अपर मुख्य कार्यपालक अधिकारी
ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण

प्रेरणा सिंह, अपर मुख्य कार्यपालक अधिकारी
ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण

मनीष मीणा अपर मुख्य कार्यपालक अधिकारी
यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण

अनिल शर्मा, क्षेत्रीय प्रबंधक यूपीसीडा

राजेश कुमार सिंह (दाएं) एवं शैलेंद्र कुमार सिंह (बाएं),
अपर मुख्य कार्यपालक अधिकारी यमुना
एक्सप्रेस वे औद्योगिक विकास प्राधिकरण

योगी आदित्यनाथ
माननीय मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश

YEIDA
उत्कृष्टता की यात्रा के 25 वर्ष

Yamuna Expressway Industrial Development Authority
YEIDA
FUTURE IS HERE

नन्द गोपाल गुप्ता 'नन्दी'
औद्योगिक विकास मंत्री, उत्तर प्रदेश

जसवन्त सैनी
औद्योगिक विकास राज्य मंत्री, उत्तर प्रदेश

राष्ट्र के आकांक्षाओं की उड़ान

अगली पीढ़ी के ग्रोथ कॉरिडोर के तौर पर रणनीतिक रूप से तैयार किया गया YEIDA, तेज़ी से एक ऐसे केंद्र के रूप में उभर रहा है जहाँ विश्व-स्तरीय इंफ्रास्ट्रक्चर, भविष्य के उद्योग और बेजोड़ कनेक्टिविटी का संगम है। नोएडा इंटरनेशनल एयरपोर्ट से मिली नई ऊँचाइयों के साथ, YEIDA निवेश, इनोवेशन और रोज़गार का केंद्र है । 25 साल के पड़ाव पर YEIDA, नई रफ़्तार के साथ आगे बढ़ने और उत्तर प्रदेश के $1 ट्रिलियन की अर्थव्यवस्था और 'विकसित भारत' के विज़न को साकार करने के लिए समर्पित है।

YEIDA @ 25 : प्रमुख उपलब्धियाँ

उत्कृष्टता का पर्याय

विकास का इंजन
100 मीटर चौड़े यमुना एक्सप्रेसवे पर बसा, निर्बाध क्षेत्रीय कनेक्टिविटी के साथ

लैंड बैंक
3,000+ हेक्टेयर का नियोजित विकास क्षेत्र, दीर्घकालिक विस्तार और विकास की क्षमता युक्त

शहरी अवसंरचना को प्रोत्साहन
सस्टेनेबल शहरी जीवन के लिए एकीकृत सड़कों, यूटिलिटीज, हरित क्षेत्र और सामाजिक अवसंरचना के साथ नियोजित सेक्टर

विश्वसनीय विद्युत इंफ्रास्ट्रक्चर
निर्बाध और गुणवत्तापूर्ण बिजली आपूर्ति सुनिश्चित करते समर्पित सबस्टेशन और उच्च क्षमता वाला ट्रांसमिशन नेटवर्क

अतुलनीय कनेक्टिविटी

भारत का एविएशन गेटवे
नोएडा अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा – 11,700+ एकड़, 22.5 करोड़ वार्षिक यात्री क्षमता।

लॉजिस्टिक्स एवं माल ढुलाई का लाभ
ईस्टर्न डेडिकेटेड फ्रेट कॉरिडोर (DFC) | एयरपोर्ट DFC कनेक्टिविटी | 87 एकड़ कार्गो हब | एयरपोर्ट से दिल्ली-मुंबई एक्सप्रेसवे तक संपर्क

शानदार कनेक्टिविटी
दिल्ली - वाराणसी के बीच प्रस्तावित हाई स्पीड रेल कनेक्टिविटी | चोला (कोलकाता-हावड़ा लाइन) से रुंधी (मुंबई लाइन) तक रेल कनेक्टिविटी | प्रस्तावित रैपिड रेल ट्रांज़िट सिस्टम (RRTS)

एक्सप्रेसवे नेटवर्क
100 मीटर चौड़ा ईस्टर्न पेरिफेरल एक्सप्रेसवे | 130 मीटर चौड़ी सड़क - ग्रेटर नोएडा से YEIDA तक | 100 मीटर चौड़ा एक्सप्रेसवे - पलवल से खुर्जा तक | गंगा एक्सप्रेसवे

उद्योग जगत का आकर्षण

निवेश का केंद्र
2017 से अब तक ₹50,000+ करोड़ का निवेश; मजबूत नीतिगत समर्थन।

औद्योगिक विस्तार
2,730+ एकड़ में 2,200+ प्लॉट, जो दे रहे औद्योगिक विकास को गति ।

रोज़गार सृजन
विभिन्न क्षेत्रों में लगभग 4 लाख रोजगार सृजित।

विकास के लिए नियोजित

सेक्टोरल मेगा पार्क
मेडिकल डिवाइसेस, डेटा सेंटर, अपैरल, MSME, खिलौने, हस्तशिल्प एवं सेमीकंडक्टर पार्क के क्लस्टर।

इलेक्ट्रॉनिक्स हब
सेक्टर-10 में इलेक्ट्रॉनिक मैन्युफैक्चरिंग क्लस्टर।

वैश्विक शहर
सिंगापुर, जापानी एवं कोरियन सिटी – प्रत्येक 500 एकड़।

फिनटेक हब
कार्यालय, रिटेल और आवास का एकीकृत उभरता इकोसिस्टम।

अंतरराष्ट्रीय फिल्म सिटी
230+ एकड़ में विश्वस्तरीय फिल्म निर्माण सुविधा।

फ्यूचर मास्टरप्लान – विकास का पथ

टप्पल - बाजना अर्बन सेंटर में प्रस्तावित लॉजिस्टिक्स हब

राया अर्बन सेंटर, मथुरा में प्रस्तावित हेरिटेज सिटी

हाथरस अर्बन सेंटर का प्रस्तावित मास्टर प्लान

आगरा अर्बन सेंटर का प्रस्तावित मास्टर प्लान

Yamuna Expressway Industrial Development Authority
YEIDA
FUTURE IS HERE

यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण
(उत्तर प्रदेश सरकार का उपक्रम)
प्रथम तल, वाणिज्यिक परिसर, पी-2, सेक्टर- ओमेगा I, ग्रेटर नोएडा, गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश, 201308
वेबसाइट: www.yamunaexpresswayauthority.com